नाग नगर की राजकुमारी

नाग नगर की राजकुमारी

[सात मनोहर कहानियाँ]

विमला पाण्डेय

राजकमल प्रकाशन
दिल्ली बम्बई इलाहाबाद पटना मद्रास

मूल्य—२·५० रुपये

प्रथम संस्करण, १९५५

द्वितीय संस्करण, १९६०

मुद्रक—श्री गोपीनाथ सेठ, नवीन प्रेस, दिल्ली

प्रकाशक—राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली

अपने भाई

रामानन्द, अनुजकुमार और अरुणकुमार

तथा अपनी बहन सुशीला, विजयश्री

और रागिनी देवी को

स्नेह सहित

क्रम

भूमिका

इस पुस्तक की कहानियाँ आज की प्रचलित कहानियों जैसी नहीं हैं। वस्तुतः इस प्रकार की कहानियाँ मानव-सभ्यता के इतिहास की वह अखण्डित कड़ियाँ हैं जिनसे आधुनिक समय में मानव-संस्कृति के अनुशीलन में नवीन दिशाओं और नवीन पथों के दर्शन हुए हैं। इन पौराणिक कहानियों का प्रत्येक जाति के जीवन में एक विशेष अस्तित्व रहा है, इसीलिए विश्व की विभिन्न जातियों की पौराणिक कथाओं के तुलनात्मक अध्ययन से आज हम उन अनेक गुत्थियों को सुलभा सके हैं जो हमारे प्राचीन पौराणिक साहित्य में युगों से एक रहस्य बनकर अटकी हुई थीं। इसी तुलनात्मक अध्ययन से हमने अपने पूर्वजों के आदिम जीवन के उस सार्वभौम समत्व और भोलेपन का दर्शन किया है, जिसकी ठोस बुनियाद के ऊपर ही हमारी आज की उत्कृष्ट सभ्यता का विशाल भवन खड़ा हुआ है।

ये कहानियाँ बालकों और किशोरों का सदा से ही मनोरंजन करती आई हैं। तरुणों को भी इनसे साहस,

संकल्प, मनोरथ और जीवन के प्रति अदम्य उत्साह की प्रेरणा मिलती रही है। इन कहानियों के विचित्र वातावरण और अनोखी घटनाओं वाले अद्भुत जगत् में तरुणों की कल्पना अपने पूरे पर फैलाकर सदा ही गगन-विहार करती रही है। इस कारण उन्हें (तरुणों को) उत्फुल्ल और उन्मुक्त व्यक्तित्व के विकास में बड़ी सहायता मिली है। सच तो यह है कि युवकों और वृद्धों के जीवन में भी इन कहानियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि बुढ़ापे के साथ जवानी और बचपन का सरस नाता इनके ही कारण अटूट बना रहता है। बचपन में हम अपने बूढ़ों से सुनते हैं, और अपने बुढ़ापे में अपने बच्चों को सुनाते हैं। इस प्रकार न जाने कितनी पुरानी होती हुई भी पौराणिक कहानियाँ हमारे जीवन से छूट नहीं पाई हैं।

इस प्रकार की कहानियों में कहीं कोई दानव है जो किसी राजा की परम रूपवती कुमारियों को किसी अँधेरी गुफा में, या किसी बड़े सुरक्षित दुर्ग में छिपा देता है। उस दानव का प्राण उसके शरीर में न होकर किसी दूसरी जगह रहता है, इससे उसको मारकर उन राजकुमारियों का उद्धार करना बड़ा कठिन होता है। पहली कहानी में इसी प्रकार के दानव का वर्णन है।

राजकुमारियों का उद्धार करने वाला तरुण जादूगर की हवेली से बड़ी चालाकी से जादूगर का छोटा चन्द्रमा, और उसकी वह गाय चुरा लाता है जो अपने सींगों से हीरों की वर्षा कर देने वाली है। उस तरुण की चालाकी और हिम्मत अन्तिम कहानी वाले उस युवक की याद दिलाती है जो एक क्रूर और दुष्ट राजा की सारी शक्तियों को अकेले कुण्ठित करके उसकी चाल-बाज़ियों का प्रतिकार करने में सफलता प्राप्त करता है। इसी प्रकार किसी कहानी में ऐसे महल का वर्णन है जिसके भीतर पहुँचकर मुँह में खाने की कोई चीज़ रखते ही खाने वाला पत्थर हो जाता है। कहीं पंख-धारी सात मुँहों वाला नाग है, तो कहीं वह सफेद घोड़ी जो कठौते के जल में सिर धोने वाले व्यक्ति के बालों को सुवर्ण बना देती है। कहीं किसी जादूगर की कन्या अपने कंघों को ऊपर फेंककर पलक मारते ही जंगल-का-जंगल काटकर फेंक देती है, और लकड़ी के टुकड़े से पृथ्वी पर चोट करके क्षण-भर में एक विशाल महल खड़ा कर देती है। आज के युग के लिए अविश्वसनीय इस प्रकार की अनेक घटनाएँ इन पौराणिक कहानियों में पाकर हम अपने पूर्वजों की बूढ़ी अकल पर कभी तो तरस खाते हैं, कभी इन बातों को कोरी कविता समझ

इनसे अपना कुछ मनोरंजन कर लेते हैं, और कभी उनके प्रति श्रद्धा होने से इन्हें धर्म का अंग बना लेते हैं।

वास्तव में पौराणिक कहानियाँ पूर्वजों की बूढ़ी अकल का परिणाम नहीं, वरन् हमारे पूर्वजों के रूप में मानवता के बालकों के समान सरल मन का प्रमाण हैं। नित-नित नवीन और अचरज-भरी प्रकृति की करामातों को देख-देख, तर्करहित नादान बालक उन घटनाओं के सम्बन्ध में जो कुछ सोचकर, जिस बालकोचित भाषा में उनका वर्णन करता है, उस भाषा को सयानों की भाषा मानकर हम यदि अपनी प्रौढ़ भाषा से उसकी तुलना करें तो यह उनकी नादानी कैसे है ? वस्तुतः हमारे पूर्वज कार्य और कारण का सम्बन्ध नहीं जानते थे। भौतिक-विज्ञान का विकास तो आज हुआ है। पूर्वजों की अत्यन्त आदिम अवस्था में प्रकृति के विभिन्न रूप उनकी निगाह में विविध देवताओं के ही स्वरूप थे, जो उनके ही समान हृदय रखते थे तथा उनके ही समान कार्य भी करते थे, और कल्पना करते थे कि प्रकृति भी उनकी ही जैसी भावनाएँ रखती है। वे जड़ और चेतन में आज के लोगों के समान अन्तर नहीं जान पाते थे, इसीलिए बादल, बिजली, वर्षा, प्रकाश और अन्धकार सबमें वे अपने ही समान आत्मा और प्राण

की कल्पना करते थे। प्रकृति के विभिन्न क्रिया-कलापों में उनके लिए जो हितकर थे, उन्हें प्रकृति का दयालु देवता मानकर वे उनकी उपासना करते, और जो अनिष्ट-कारी तत्त्व थे उन्हें दानव मान उनके संहार के लिए अपने देवताओं से प्रार्थना करते थे। ज्योतिमान सूर्य और प्रकाशमान दिवस को वे अपना सबसे अधिक अनुकूल देवता समझते थे। इसी तरह शीत-प्रधान देशों में शिशिर को अमंगलकारी शक्तियों वाला एक महा-दानव समझा जाता था। पृथ्वी गोल है, और वह अपनी धुरी पर चौबीस घंटों में एक बार परिक्रमा कर लेती है, इसलिए चौबीस घंटों में एक दिन और एक रात होती है, यह बात वे नहीं जानते थे। इसीलिए प्रातःकालीन ज्योति (अह्न) के पीछे उदित होने वाले सूर्य को देख वे प्रेयसी उषा को प्राप्त करने के लिए अनन्त काल तक उसका पीछा कर रहे सूर्य को उसका प्रेमी मानते थे। इसी तरह जल बरसाने वाले बादलों को वे दूध-भरे थनों वाली इन्द्र की गायें, और दृष्टि-पथ से बादलों को ओझल कर देने वाले अन्धकार को वे इन्द्र की गायों को चुराकर छिपा रखने वाले पणि (असुर) मानते थे। उनकी इस मान्यता का सबसे उत्तम उदाहरण ऋग्वेद में सरमा-पणि के उपाख्यान में

मिलता है। कालान्तर में सरमा-पणि की इसी पौराणिक कथा ने यूनान देश में राजकुमार पैरिस द्वारा रानी हेलन के अपहरण और प्रसिद्ध ट्रोजन युद्ध की पौराणिक कथा को जन्म दिया हो या न दिया हो, मैक्समुलर सरमा को ही यूनानी हेलेन और पणि को ही यूनानी पैरिस मानते हैं। भारतीय आर्यों के यहाँ इन्द्र और पणि का जो युद्ध आकाश में हुआ, वही युद्ध यूनान में पृथ्वी-तल पर अवतरित किया गया।

इस प्रकार यह सिद्ध है कि पौराणिक कहानियाँ पुरातन मानव द्वारा उनकी बुद्धि के अनुसार किये गए प्रकृति के कार्यों और रहस्यों का एक स्पष्टीकरण हैं। विद्वानों की कल्पना है कि किसी अतीत युग में संसार की आज की विभिन्न आर्य जातियों के पूर्वज किसी एक ही देश में निवास करते थे, और प्रकृति के रहस्यों का स्पष्टीकरण उन्होंने उस समय जिन पौराणिक कथाओं के रूप में किया था, वे ही पौराणिक कथाएँ उन मूल पुरुषों के वंशजों के भिन्न-भिन्न भू-भागों में छिटक जाने पर उनके साथ गईं। और कालान्तर में कुछ-कुछ परिवर्तित हो जाने पर भी बहुत अंशों में आज भी परस्पर समान पाई जाती हैं। यही कारण है कि संसार की विभिन्न जातियों की पौराणिक कथाओं में इतना साम्य

दीख पड़ता है।

हमारे यहाँ के ब्रह्माण्ड शब्द ही से पता चलता है कि हमारे पूर्वज विश्व की कल्पना एक अंडे के रूप में करते थे। फिनलैंड की पौराणिक कथाओं के अनुसार सारा आकाश एक विशाल अंडे का टुकड़ा है। सम्भवतः क्षितिज में पृथ्वी और आकाश को मिला हुआ देखकर वे आकाश के गोल होने की कल्पना कर लेते थे। पालीनीशिया द्वीप के निवासी सभी विदेशियों को 'पापा-लंगी' (आकाश भेदकर आने वाला प्राणी) कहते हैं, क्योंकि क्षितिज में आकाश को पृथ्वी से मिला हुआ देखकर वे यही समझते हैं कि वहाँ आकाश ने पृथ्वी पर उतरकर उसे बाँध दिया है, अतः क्षितिज के पार से आने वाला प्राणी अवश्य ही आकाश को फोड़कर आता होगा।

आर्य जाति की पौराणिक कथाओं में सन-सन करती हुई हवा की श्वान या भेड़िये के रूप में कल्पना हुई है। प्रायः ठण्डे देशों में ऐसी हवा मृत्यु का संदेश लेकर आती है। संभवतः इसी कारण यम के साथियों में कुत्ते को भी स्थान मिला है। ईरान में मृत्यु के निकट पहुँचे हुए प्राणी की खाट से कुत्ते को बाँध देते हैं। शायद इसलिए कि मर जाने पर उस प्राणी की

आत्मा को यम के पास पहुँचाने के लिए एक वाहन तुरन्त तैयार रहे।

यूनान देश की पौराणिक कथाओं में 'हरमीज़' अपनी शैशवावस्था में पालने से ही उचककर अपोलो (सूर्य) की गायों को चुरा लाता है। हमारी पौराणिक कथाओं के अनुसार 'मरूत' का पुत्र 'मारुति' पालने से उचककर सूर्य को ही निगल जाता है। वस्तुतः यह वायु की अपार शक्ति का ही पौराणिक रूप है। वायु की इसी शक्ति ने कालान्तर में, अनेक देशों में, अनेक रूपों में, पौराणिक कहानियों के उस 'चतुर चोर' को जन्म दिया है, जो करोड़ों बाधाओं के होते हुए भी जिस वस्तु को लेना चाहता है, उसे लेकर ही छोड़ता है। इस संग्रह की अन्तिम कहानी उसी मूल पौराणिक कहानी का एक सुन्दर रूप है।

किस ज़मीन के गर्भ में पानी मिल सकता है, यह बताने वाले लोग प्रायः किसी खास पेड़ की तिकोनी टहनी हाथ में लेकर टहलते हैं। कई देशों में ज़मीन के अन्दर के खनिज पदार्थों का अनुसन्धान करने में भी किसी वृक्ष-विशेष की टहनी का इसी प्रकार उपयोग किया जाता है। संसार के अनेक देशों की पौराणिक कथाओं में किसी वृक्ष की लकड़ी, पत्ती या फूलों के

सहारे पहाड़ को चीरने, पृथ्वी को फाड़कर उसमें गड़ा खजाना निकालने, अथवा किसी चोर या हत्यारे को पकड़ने का भी वर्णन मिलता है। अलीबाबा चालीस चोर की कहानी में तो केवल सिसम (तिल) का नाम लेने-भर से रत्न-गृह के बन्द फाटक खुल जाते हैं। भारतवर्ष में गुड़हल या जासोना (जपा कुसुम) तथा नीम की पत्तियाँ प्रेत-बाधा को दूर करने में समर्थ मानी जाती हैं। तिल, जासोना तथा नीम की पत्तियाँ तिकोने दाँतों वाली होती हैं। आकाश में अन्धकार में जब लहरदार बिजली चमकती थी तो पूर्वजों को बादल, जो पहाड़ के समान दीखते थे, ऊपर से नीचे तक क्षण-मात्र में विदीर्ण हो रहे जान पड़ते थे। इसी प्राकृतिक घटना का स्पष्टीकरण भिन्न-भिन्न देशों की पौराणिक कथाओं में इन अनेक रूपों में अवतरित हुआ है। 'कपोत कुमारी' कहानी में वह कुमारी लकड़ी के एक टुकड़े से ज़मीन पर चोट करके एक बड़ा महल ही खड़ा कर देती है।

नार्वे तथा स्वीडन की पौराणिक कथाओं में आकाश को समुद्र तथा बादलों को नौका कहा गया है। कहा जाता है कि वहाँ के देवता 'ओडिन' के पास एक सुनहली नाव है। समर-क्षेत्र में काम आये हुए

वीरों की आत्मा को अपनी उस नौका पर बिठाकर ओडिन 'वालहाला' (स्वर्ग) में पहुँचाते हैं। इसी पौराणिक कथा का वहाँ के जन-जीवन में यह प्रभाव पड़ा कि लोग मुर्दों को गाड़ते समय उनके मुँह में मल्लाही (खेवा) के लिए कोई सिक्का रख देते और काठ की एक नाव भी शव के साथ ही कब्र में गाड़ते थे। नार्वे की पौराणिक कथा में बिजली को एक चमकीली सर्पिणी कहा गया है। बादलों को गाय और नौका के अतिरिक्त दूसरे रूपों में भी देखा गया है। अरब की पौराणिक कथाओं में बादल उस विशाल पक्षी के रूप में वर्णित हैं, जिसके डैने दस सहस्र योजन लम्बे होते है। यूरोप के कई देशों में तूफ़ान उठाने वाले बादल विशाल चील के रूप में वर्णित हैं। जीमूत-वाहन (इन्द्र) के प्रतिरूप विष्णु के वाहन हमारे यहाँ भी गरुड़ हैं जो पंजों में सर्पिणी को दबोचे रहते हैं। कनाडा के आदिम निवासी आज भी बादलों को क्रुद्ध सर्प और उनकी ठनक को उस सर्प की फुफकार मानते हैं। कई देशों की पौराणिक कथाओं में बादलों को पहाड़ तथा पक्षी एक साथ ही समझने की चेष्टा ने एक ही शब्द से दोनों अर्थ निकालने की सूझ को जन्म दिया। इसीलिए संस्कृत में पर्वत शब्द से बादल और

पहाड़ दोनों अर्थ निकलते हैं। संभवतः इसीलिए हमारी पौराणिक कथाओं में पहले पर्वतों के पंख होने का वर्णन है। कहते हैं कि इन्द्र ने जब पर्वतों के पंख काट डाले तो वे समुद्र और पृथ्वी पर गिर पड़े, और अभी तक बेचारे वैसे ही पर-कटे पड़े हुए हैं। अंग्रेज़ी का 'क्लाउड' (बादल) शब्द भी ऐंग्लो-सैक्सन भाषा के 'क्लूड' शब्द का दूसरा रूप है और उस भाषा में 'क्लूड' शब्द का अर्थ शिला होता है। नार्वेजियन भाषा का 'क्लाकर' शब्द बादल और पहाड़ दोनों ही अर्थ देता है।

आर्य जाति के अत्यन्त प्राचीन पौराणिक आख्यान के अनुसार आकाश नीला समुद्र था, और उसका स्वामी था वरुण। बादल उसकी नौकाएँ थीं और मित्र उसका भाई था। इसीलिए वरुण जल का देवता था, और वरुणानी (लक्ष्मी) का समुद्र-मंथन से आविर्भाव हुआ। कहें तो कह सकते हैं कि देवासुर-संग्राम ही प्राकृतिक कार्यों का एक पौराणिक रूप है। यह संग्राम समुद्र में न होकर आकाश में होता है। प्रकाश ही देव और अन्धकार ही दानव है। बिजली ही मंथन करने वाले मन्द्राचल को बाँधने वाला महाव्याल और बादल ही मथानी बनने वाला मन्द्राचल है। इस प्रकार आकाश को बिजली से मथने वाले बादल ही वर्षा-जल (अमृत)

का उपार्जन करते हैं।

संक्षेप में, इन कहानियों में मनोरंजन और मनन की बहुत प्रचुर सामग्री है। किशोरों और तरुणों के लिए ये कहानियाँ मनोरंजन की चीज़ हैं, तो युवकों तथा बुजुर्गों के लिए मनन और तर्क की सामग्री हैं। गाँवों में बसने वाली जनता तथा नगर-निवासी बालकों और किशोरों का इधर कुछ दिनों से इस प्रकार की कहानियों से सम्बन्ध टूट गया है। हमें आशा है कि उनके लिए ये कहानियाँ बड़ी उपयोगी सिद्ध होंगी। उनका मनोविनोद तो इनसे होगा ही, साथ ही कहानियों के क़हने तथा सुनने की परम्परा के फिर से जारी करने में भी इनसे सहायता मिलेगी।

कुमारी विमला पाण्डेय ने सरल-से-सरल अत्यन्त प्राणवती सुनने-सुनाने की ऐसी उपयुक्त भाषा में इन कहानियों का संग्रह कर एक सराहनीय कार्य किया है। इसके लिए उन्हें हमारी हार्दिक बधाई!

सागर विश्वविद्यालय
जनवरी, १९५५

राजनाथ पाण्डेय

जीवन-दानी कुमार किशोर

: १ :

पुराने समय की बात है, बड़ी दूर के एक गाँव में एक गरीब आदमी रहता था। उस बेचारे के लड़के-बच्चे तो कई थे, पर बच्चों को खिलाने-पिलाने का कोई साधन न था। दिन-भर जंगल में लकड़ी काट-कर वह बाज़ार में बेचता और जो कुछ इस तरह उसे मिल जाता, उसी से अपनी पत्नी और बच्चों की पर-वरिश करता था।

एक दिन जब वह जंगल में लकड़ी काट रहा था, एक भलामानुस उधर आ निकला और उस लकड़हारे से बोला, "क्यों भाई, तुम रोज़ यह क्या करते हो ?"

"अपने बाल-बच्चों की रोटी के लिए लकड़ी काटता हूँ, महाराज !" उसने उत्तर दिया।

"क्या तुम ऐसे गरीब हो ?"

"हाँ मालिक, मैं बड़ा गरीब हूँ।"

इस पर उस भलेमानुस ने कहा कि अगर वह अपना लड़का, जिसका उसके घर में शीघ्र ही जन्म

होने वाला है, गोद लेने के लिए उसे दे दे तो वह बदले में बहुत सा धन दे सकेगा।

बेचारा लकड़हारा राजी हो गया। उस भलेमानुस ने उसके साथ आकर उसका घर देखा, और दूसरे दिन आकर उसे बहुत सा धन दे दिया। पूछने पर उसने अपना नाम मलद बतलाया।

कुछ दिनों बाद उस गरीब की पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। दो महीने बीत गए परन्तु उस भलेमानुस ने उनकी कुछ खोज-खबर न ली। ये बेचारे उसका घर नहीं जानते थे, नहीं तो उसे खबर कर देते।

एक दिन की बात है कि जब उस लड़के के नामकरण की तैयारी करके ये लोग बालकसहित पण्डितजी के घर जा रहे थे, रास्ते में इन्हें वह आदमी दिखाई दिया। उसने इनसे कहा कि लड़के का नाम किशोर रखा जाय। पण्डितजी ने भी यह नाम पसन्द किया। फिर जब ये सब लोग पण्डितजी के यहाँ से वापस लौट रहे थे तो रास्ते ही में बूढ़े मलद ने बालक को उसकी माता की गोद में से झपटकर छीन लिया और सबके देखते-देखते धुआँ होकर हवा में उड़ गया।

अपने नन्हे-मुन्ने को इस प्रकार खोकर वे बहुत

दुखी हुए। यद्यपि देखने में भलामानुस किन्तु कार्य में क्रूर उस व्यक्ति से इन्हें बहुत सा धन मिला था, तथापि बच्चे का वियोग इन्हें बहुत दिन तक दुख देता रहा। धीरे-धीरे समय बीतता गया और ये लोग अपना गम भी भूल गए।

: २ :

वास्तव में मलद के कोई पुत्र न था। उसके कन्याएँ तीन थीं। उसकी पत्नी बहुत जादू-टोना जानती थी। बालक किशोर उस जादूगरनी का दूध पीकर बहुत जल्दी सयाना हो गया और सात वर्ष बीतते-बीतते एक जवान पुरुष-जैसा ऊँचा और हृष्ट-पुष्ट दीखने लगा।

एक दिन किशोर के धर्म-पिता ने उससे पूछा, "बेटा, क्या तुम अपने घर नहीं जाना चाहते हो ?"

यह बात सुनकर बालक किशोर को बहुत आश्चर्य हुआ और उसने पूछा, "पिताजी, क्या यह मेरा घर नहीं है ?"

"नहीं। तुम्हारा घर कुछ दूर है। अगर तुम वहाँ जाना चाहो तो तुम्हें तीन दिन की की छुट्टी दे सकते हैं। सामने वाले पर्वत को पार कर दाहिनी ओर से

जब तुम और आगे बढ़ोगे तो तुम्हें एक नदी मिलेगी। उस नदी को पार करने पर जो एक गाँव दिखाई देगा, उसमें जाने पर जो घर सबसे पहले दीखेगा उसी में तुम्हारे माँ-बाप रहते हैं।"

पहाड़ लाँघ और नदी को पारकरके किशोर उस गाँव में पहुँचा और प्रथम मकान के द्वार पर दो लड़कों को लकड़ी फाड़ते देख उसने उन्हें नमस्कार किया तो वे बड़े प्रसन्न हुए। उसने उन्हें बताया कि वह उनका छोटा भाई किशोर है। तब तो वे उसे मकान के भीतर अपनी माता के पास लिवा ले गए। वहाँ जब किशोर ने अपना नाम लेकर यह कहा कि उसके धर्म-पिता मलद ने उसे तीन दिन की छुट्टी देकर माता-पिता के पास भेजा है, तो उनको अपार प्रसन्नता हुई। सात वर्ष की उम्र में ही उसे जवान-जैसा हृष्ट-पुष्ट देख वे सब-के-सब दंग रह गए।

तीन दिन उन लोगों ने आमोद-प्रमोद में तीन घंटों की तरह बिता दिए। फिर चौथे दिन जब किशोर अपने धर्म-पिता के यहाँ जाने को तैयार हुआ, तो उसके दोनों बड़े भाई भी उसके साथ जाने के लिए ज़िद करने लगे। निदान माता-पिता को अनुमति देनी पड़ी। किशोर अपने दोनों भाइयोंसहित जादूगरनी के

यहाँ पहुँचा, किन्तु उन्हें देखकर जादूगरनी को कुछ विशेष प्रसन्नता नहीं हुई।

उसने रात में अपने पति से कहा कि यह अच्छी बात नहीं हुई। ये तीनों भाई सयाने होकर ज़रूर हम लोगों के साथ कोई भारी उत्पात करेंगे, इसलिए इन्हें समाप्त कर देना ही ठीक होगा। बूढ़ा मलद ऐसा क्रूर कर्म करना नहीं चाहता था, किन्तु उसकी पत्नी उसे क्षण-भर भी चैन नहीं लेने देती थी। अन्त में बूढ़े को राजी होना पड़ा और उसने कह दिया कि आज से तीन दिन बाद रात में वह उनकी हत्या कर डालेगा।

रात में जादूगरनी की तीन लड़कियाँ अपने-अपने सिर पर चमकदार मुकुट के आकार की टोपी पहन-कर सोतीं और किशोर तथा उसके भाई उसी कमरे के दूसरे कोने में सूती कपड़े की टोपियाँ पहनकर सोया करते थे। संयोग ऐसा हुआ कि उस रात सोने के पहले उन लड़कियों ने किशोर और उसके भाइयों के साथ हँसी-हँसी में टोपियाँ बदल लीं, और सूती कपड़े वाली टोपी अपने सिरों पर लगाकर वे सो रहीं। उधर आधी रात को बूढ़ा मलद अपनी कटार लेकर उन तीनों कुमारों की हत्या करने के लिए वहाँ आया। चमकीले मुकुटों को देखकर वह उस ओर न जा दूसरे कोने में

चला गया और सूती टोपी वाले सिरों का उच्छेदन कर अपनी पत्नी के कमरे में वापस आ सो रहा। परन्तु किशोर सोया न था। वह सारा अनर्थ देख रहा था। थोड़ी देर बाद जादूगरनी ने अपने पति से पूछा, "काम कर आये ?" उसने कहा, "हाँ।" पर उसे अपने पति की अकल पर पूरा भरोसा नहीं था, अतः एक दीपक लेकर स्वयं उस कमरे में गई। वहाँ जो दृश्य उपस्थित था उसे देखते ही वह पछाड़ खाकर ज़मीन पर गिर पड़ी।

बूढ़े मलद के कमरे से निकलकर बाहर जाते ही किशोर ने अपने भाइयों को जगाकर सारा दास्तान सुनाया और वे तीनों झटपट वहाँ से भाग निकले। चलते-चलते किशोर ने अपने धर्म-पिता का लम्बा लक्कड़ तोड़, बूट भी गठरी में बाँधकर सिर पर धर लिया था, जिससे वह उनका पीछा न कर सके। वे तीनों भाई रातों-रात वहाँ से बहुत दूर निकल गए।

: ३ :

दिन-भर चलते-चलते वे एक नगर में पहुँचे तो क्या देखा कि नगर के सभी लोग उदास और दुखी हैं। पूछने पर उन्हें मालूम हुआ कि उस देश के राजा की तीनों राजकुमारियों को न जाने कौन चुरा ले गया

है और लोग उन्हें ढूँढ़-ढूँढ़कर थक गए हैं, पर उनका कहीं पता नहीं मिलता है। यह सुनते ही किशोर बोल उठा, "पर मैं तो उनको ढूँढ़कर ला सकता हूँ।"

उसका यह कहना था कि कई लोग दौड़ते हुए राजा के महल में जा पहुँचे, और समाचार दिया कि तीन जवान परदेशी नगर में आज ही आये हैं, जो कहते हैं कि वे राजकुमारियों को ढूँढ़कर ला सकते हैं। राजा ने अपने सिपाही भेजकर उन्हें दरबार में बुलाया और राजकुमारियों को ढूँढ़कर लाने का आदेश दिया।

तीनों भाई राजकुमारियों की तलाश में निकल पड़े। जंगल में कुछ दूर जाने के बाद उन्हें मार्ग में एक बुढ़िया मिली। बुढ़िया ने उन अत्यन्त रूपवान और समान वय वाले तीन जवानों को ख़तरों से भरे उस बीयाबान की तरफ़ जाते देख उनसे कहा, "काय ओ भैया! तुम सब इते कहाँ जात हो? तुमरी बऊ (माँ) नहीं है का, जो ऐसे भयानक जंगल को चले जा रए हो?"

"बूढ़ी अम्माँ, बूढ़ी अम्माँ! हम तीनों भाई तुम्हारे राजा की खोई हुई राजकुमारियों को ढूँढ़ने जा रहे हैं।"

अम्माँ का सम्बोधन करने से बुढ़िया को उन पर दया आ गई। उसने कहा कि पहले जाकर राजा से एक

बड़ी बाल्टी, एक घण्टा और दस जोजन लम्बा एक मोटा रस्सा माँग लाओ, तब मैं तुमसे कुछ कहूँगी।

बुढ़िया की यह बात सुनकर दो भाई तुरन्त महल को लौट पड़े। थोड़ी देर में ही कुछ दरबानों के सिर पर सब सामान रखवाकर वे वहाँ आये। बुढ़िया सबसे छोटे कुमार को साथ ले थोड़ी दूर गई और वहाँ एक कुएँ की ओर संकेत करके बोली, "वे सबरी इतेई मिले हैं।"

इतना कहकर बुढ़िया तो एक तरफ चली गई, और कुमार किशोर अपने भाइयों के पास आकर सब सामान सहित उसी कुएँ पर फिर जा पहुँचा।

कुएँ में पैठने के लिए सबसे पहले बड़े भाई साहब तैयार हुए। परन्तु जब वे बाल्टी में बैठ गए और अन्य दोनों भाई उन्हें नीचे उतारने लगे तो उन्होंने बाल्टी में वह घण्टा रख देने के लिए संकेत किया और बोले, "अगर मैं डरकर घण्टा बजाऊँ तो रस्सी तुरन्त ऊपर को खींच लेना।"

थोड़ी देर बाद ही उस महाभयानक अन्धकार में उनका दम घुटने लगा और डरकर बजा ही तो दिया घण्टा उन्होंने। दोनों भाइयों और एक-दो नौकरों ने, जो वहाँ रुक गए थे, खींच-खाँचकर बड़े भाई साहब

को बाहर किया। फिर मझले भाई साहब बाल्टी में बैठे। पहले से कुछ अधिक नीचे उतरने के बाद उसने भी घण्टा पीट दिया, और फिर लोगों ने उसे भी बाहर खींच निकाला। तब अन्त में सबसे छोटा भाई कुमार किशोर बाल्टी में बैठा और नीचे उतरता चला गया। जब सारी रस्सी चुक गई और बाल्टी ज़मीन पर जा लगी, तब वह उतरा। वहाँ एक बड़ा आलीशान महल था। उस महल के भीतर उसे एक बड़ी रूपवती जवान औरत बैठी दिखाई पड़ी, जिसकी गोद में एक नाग गेंडुर मारकर सो रहा था। किशोर को सामने खड़ा देखकर वह युवती बोली, "अपनी खैरियत चाहो तो तुरन्त यहाँ से प्राण लेकर भाग जाओ, नहीं तो एक घण्टे बाद जब यह सोकर उठेगा तो तुम्हें निगले बिना नहीं छोड़ेगा।"

किशोर ने कहा, "राजकुमारी, धीरे-धीरे नाग महाराज को खिसकाकर गोद से नीचे कर दो। मैं तुम्हारा उद्धार करने आया हूँ।" राजकुमारी ने धीरे-धीरे नाग को गोद से सोता हुआ ही सरकाकर ज़मीन पर धर दिया। किशोर ने तुरन्त राजकुमारी को बाल्टी में बिठा दिया और रस्सी खींचकर जो इशारा दिया तो वह ऊपर खींच ली गई। अब किशोर महल में और

भीतर घुसा तो उसने देखा कि एक दूसरे वैसे ही कमरे में दूसरी सुन्दरी अपनी गोद में एक सोये हुए सिंह का सिर रखे ज़मीन पर बैठी है। उसने भी किशोर को वहाँ से तत्काल भाग जाने की सलाह दी, किन्तु उसने राजकुमारी से सिंह का सिर अपनी गोद से धीरे-धीरे नीचे खिसका देने के लिए निवेदन किया। राजकुमारी ने वैसा ही किया जैसा किशोर ने कहा और फिर किशोर ने उसे भी ऊपर खींच लेने का संकेत किया।

दूसरी राजकुमारी को ऊपर पहुँचा देने के बाद किशोर महल में तीसरी राजकुमारी की खोज करने लगा, किन्तु किसी भी कमरे में उसे कोई अन्य राजकुमारी न मिली। अन्त में नाग तथा सिंह के जागने का समय निकट जान वह खुद भी बाल्टी में बैठकर बाहर आ गया। राजा को खबर मिली तो उसने पालकी भेजकर राजकुमारियों को उन तीनों भाइयों सहित अपने महल में बुलवा मँगाया। फिर सारा हाल सुनकर राजा ने किशोर से कहा कि उन राजकुमारियों में से वह जिसे चाहे वही उसके साथ ब्याह दी जाय। किन्तु किशोर ने कहा कि पहले उसके दोनों बड़े भाइयों का ब्याह हो जायगा तब उसका होगा। निदान उन दोनों राज कुमारियों के साथ उसके भाइयों का विवाह हो गया

ग्रौर वे वहाँ सुख से रहने लगे। तीसरी राजकुमारी को ढूँढ़ लाने के बाद ही वह ग्रपना विवाह करेगा, यह कहकर किशोर वहाँ से चल पड़ा।

: ४ :

सबसे छोटी राजकुमारी की खोज में वन, पर्वत, नदी-नाले लाँघता हुग्रा न जाने कितने दिन तक किशोर भटकता रहा, किन्तु उसका कहीं कुछ भी पता न लगा। किशोर के पवित्र विचारों ग्रौर मनोहर व्यवहारों की चर्चा बहुत दूर-दूर तक फैल गई थी ग्रौर ग्राकाश के पक्षी तक उसे पहचानने लगे थे। जादूगरनी के घर में रहकर उसने पशु-पक्षियों की भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

एक दिन की बात है कि एक जंगल में दूर पर उसे एक कुत्ता ग्रौर एक भेड़िया दिखाई पड़ा। उसका रास्ता उसी ग्रोर से गया था। ग्रतः जब वह उनके निकट पहुँचा तो देखा कि वहाँ एक मरी हुई भेड़ के पास कुत्ता ग्रौर भेड़िया बैठे हैं ग्रौर वहीं एक बहरी (बाज़ पक्षी) ग्रौर लाल रंग की बड़ी जात वाली एक चिउँटी भी है। किशोर को देखते ही वे सब-के-सब एक साथ बोल उठे, "किशोर! किशोर! तुम कहाँ

जा रहे हो ? दो दिन हुए, हम इस भेड़ को मारकर यहाँ बैठे हुए हैं, पर हमारी समझ में नहीं आता है कि हम इसका बँटवारा आपस में किस प्रकार करें। तुम अच्छे इधर आ गए भैया ! सो अब आकर हमारे सौंजे का बँटवारा तो कर दो।"

किशोर उनके निकट पहुँचा और भेड़ का सिर चिउँटी और उसके खानदान वालों के लिए, आँतें बहरी के लिए, और शेष का आधा हुँड़ार (भेड़िया) तथा श्वान के लिए देने का अपना फैसला सुनाया। इस बँटवारे से वे सब-के-सब बहुत प्रसन्न हुए। किशोर ने भी अपना रास्ता पकड़ा। उसके कुछ दूर चले जाने पर चींटी ने कहा, "बेचारे किशोर ने हमारा इतना काम किया पर हमने उसे कुछ इनाम नहीं दिया।"

चिउँटी की बात सबको भा गई और हुँड़ार किशोर को लौट आने के लिए पुकारने लगा। इस बार बेचारा किशोर कुछ डर गया। वह यह सोचता हुआ उनके पास आया कि इस बार वे उसे ही खा जायँगे। परन्तु पास आ जाने पर चिउँटी ने उससे कहा, "किशोर, तुमने हम लोगों के साथ बड़ी नेकी की, पर हम तुम्हें कुछ न दे सके। मेरा यही इनाम है कि जब कभी तुम्हें चिउँटी बनने की इच्छा हो तो कहना 'हे हरि !

चिउँटी,' और तुम तत्काल चिउँटी बन जाओगे।"

इसी प्रकार बहरी ने कहा कि बाज़ बनने के लिए 'हे हरि ! बहरी' कहना तो बहरी बन जाओगे। हुँड़ार ने कहा कि 'हे हरि ! हुँड़ार' कहते ही हुँड़ार बन जाओगे। और श्वान ने कहा कि 'हे हरि ! कुत्ता' कहते ही तुम श्वान बन जाओगे।

चिउँटी, बहरी, हुँड़ार और श्वान से यह बरदान पाकर किशोर प्रसन्न हो आगे बढा। घने जंगल में जब वह जा रहा था उस समय उसे देखकर एक कठफोड़े पंछी ने पूछा, "किशोर, तुम कहाँ जा रहे हो ?" किशोर ने कहा, "राजा की प्यारो पुत्री का पता लगाने।" पंछी ने कहा, "उसके पास पहुँचना बड़ा कठिन है। उसकी दोनों बड़ी बहनों के भाग जाने के बाद दानव छोटी राजकुमारी को लेकर लौहित्य सागर के पार एक टापू में चला गया है, और वहीं एक बड़े सुन्दर महल में उसे क़ैद कर रखा है। उस महल के द्वार और खिड़कियों को वह जकड़कर इस तरह बन्द रखता है कि उसके भीतर चिउँटी भी प्रवेश नहीं कर सकती।"

किशोर ने कठफोड़े पंछी को धन्यवाद कहा। उसने यह सुनकर भी हिम्मत नहीं हारी, वरन् राजकुमारी को

मुक्त करने की उसे और अधिक आशा हो गई। कई दिन तक लगातार चलते-चलते वह लौहित्य सागर के तट पर पहुँच गया। वहाँ पहुँचकर उसे बहरी का वचन याद आया और 'हे हरि! बहरी' कहते ही वह बाज़ पक्षी बन गया और उड़ता हुआ उस टापू पर जा पहुँचा। फिर चिउँटी बनकर वह महल के अन्दर दाखिल हुआ। वहाँ राजकुमारी के जगमगाते हुए सौन्दर्य का दर्शन करते ही वह विह्वल हो गया। फिर 'हे हरि! मानुस' कहकर उसने अपना रूप प्राप्त किया और राजकुमारी के समक्ष जा उसे अभिवादन किया। उसे देख राजकुमारी ने घबराकर कहा, "तुम कौन? यहाँ कैसे आये? अपनी खैरियत चाहो तो जैसे यहाँ आये उसी प्रकार यहाँ से झटपट भाग जाओ। तुम नहीं जानते कि दानव के आने का समय हो गया है? तुम्हें देखते ही वह तुम्हारी चटनी बनाकर धर देगा।"

किशोर ने राजकुमारी को सारा वृत्तान्त कह सुनाया और अपना संकल्प बताकर कहा, "मैं तुरन्त चिउँटी बनकर तुम्हारी कमीज़ में छिप जाता हूँ। तुम कृपा कर ज़ोर से अपनी छाती-भर मत खुजलाना, नहीं तो तुम्हारे ही नाखूनों से मेरी चटनी बन जायगी।"

वर्षों बाद राजकुमारी के मुँह पर एक मुसकान

आई ही थी कि दानव आ पहुँचा। दरवाज़ों के खुलने की आहट होने लगी। दानव ने भीतर आकर एक भुना हुआ हारिल और तीतर राजकुमारी के आहार के लिए चौकी पर पटक दिया और स्वयं एक कोने में लेटकर बोला, "सिर में बड़ी पीड़ा है। हथौड़ा लेकर इस पर पटको, जिससे दर्द घट जाय।"

बेचारी राजकुमारी से हथौड़ा उठता तक न था, पर अपनी सारी शक्ति लगाकर वह हथौड़ा दानव के सिर पर पटकती रही। कुछ देर बाद दानव फिर बाहर चला गया और उसके जाते ही किशोर ने अपना रूप फिर धारण कर लिया। फिर उसने राजकुमारी के साथ हारिल और तीतर का भोजन किया।

किशोर ने राजकुमारी से कहा कि अब किसी प्रकार इस बात का पता लगाना चाहिए कि इस दानव की मृत्यु कैसे हो सकती है। दानव के आने की आहट पा किशोर तो फिर चिउँटी बनकर छिप गया और राजकुमारी सिर पर हथौड़ा मारने के लिए दानव के कई बार कहने पर भी उदास हो बैठी ही रही। दानव के बार-बार पूछने पर कि क्या बात है जो वह ऐसी उदास बैठी है, राजकुमारी बोली, "तुम्हारे सिर में हर समय ऐसा दर्द रहता है। यदि यह किसी दिन फट

गया और तुम न रहे, तो इस महल में मैं अकेली भोजन-पानी के बिना तड़प-तड़पकर मर जाऊँगी।"

दानव ने कहा, "ऐसा कभी नहीं होने का। मेरा सिर तोड़ने वाला इस संसार में कोई भी नहीं है।" पर दानव के यकीन दिलाने पर भी राजकुमारी को तसल्ली नहीं हुई। एक-दो बार दानव के सिर पर हथौड़ा चलाकर वह रुक गई और फिर उदास होकर एक कोने में जा बैठी। तब दानव ने हँसकर कहा, "इस हथौड़े में क्या धरा है ? मेरा सिर बज्र की चोट से तो तोड़ा नहीं जा सकता। पर यह नरम भी बहुत है, क्योंकि एक बहुत ही नरम चीज़ से यह फटकर चूर-चूर हो सकता है।"

"जब तक तुम मुझे पक्का विश्वास नहीं दिला दोगे, मेरी उदासी दूर नहीं हो सकती।" राजकुमारी ने कहा।

तब दानव ने राजकुमारी को बताया कि ज़ंगल के सभी भेड़ियों में एक जो सबसे मोटा और खूंखार है, उसके पेट में एक लोमड़ी रहती है, और उस लोमड़ी के पेट में एक कबूतर छिपा हुआ है। उस कबूतर के सिर में एक अंडा है। वह अंडा जब सिर पर फोड़ा जा सके तभी सिर चूर-चूर हो सकता है। संसार में

किसी को भी यह बात मालूम नहीं है। इसलिए उसके मरने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

यह सुनकर राजकुमारी बहुत प्रसन्न हुई और बड़े उत्साह के साथ दानव के सिर पर हथौड़ा चलाने लगी। थोड़ी देर में दानव को नींद आ गई। दूसरे कमरे में जाकर राजकुमारी ने अपनी कमीज़ में से चिउँटी को बाहर निकाला। फिर जब किशोर अपने रूप में आ गया तो राजकुमारी ने दानव की कही सारी बातें धीरे-धीरे उसे कह सुनाईं। दानव के जागने से पहले ही किशोर फिर चिउँटी बन गया और जब दानव बाहर चला गया तो किशोर ने भी राजकुमारी से यह कहकर विदा ली कि अब वह कबूतर के सिर के भीतर वाला अंडा लेकर ही वापस आयेगा।

जंगल में जाकर किशोर ने देखा कि एक बड़ा भारी मोटा-सा भेड़िया एक वृक्ष की जड़ में अपने दाँत खुजला रहा है। किशोर ने उसे देखते ही 'हे हरि! हुँड़ार' कहकर भेड़िये का रूप धारण किया और थोड़ी ही देर में उस भेड़िये से लड़कर उसे मार डाला। फिर उसने ज्योंही भेड़िये का पेट फाड़ा तो उसमें से एक लोमड़ी निकल पड़ी और वह बड़ी तेज़ी से भागने लगी। किशोर ने झट 'हे हरि! श्वान' कहकर कुत्ते का रूप

धारण कर लिया और उस लोमड़ी को दबोचकर उसका भी काम तमाम किया। फिर लोमड़ी का पेट फाड़ा तो उसमें से एक कबूतर फुर्र से निकल पड़ा और आकाश में उड़ गया। तब किशोर ने 'हे हरि! बहरी' कहकर बाज़ का रूप धारण किया और उसे पकड़, उसके सिर को फाड़कर उस अंडे को निकाल लिया।

वह अंडा लेकर किशोर उसी क्षण राजकुमारी के पास महल में पहुँचा और उसे अंडा देकर स्वयं चिउँटी बन राजकुमारी की कमीज़ में छिप गया। थोड़ी देर बाद दानव भी हाँफता हुआ अपने महल में आया और राजकुमारी से बोला, "बड़ा गज़ब हो गया। वह हुँड़ार आज मारा गया। लोमड़ी भी मारी गई। और किसी ने कबूतर के सिर के भीतर वाला वह अंडा भी निकाल लिया, सो अब अगर उस आदमी ने मेरे सिर पर अण्डा पटक दिया तो सचमुच मैं मर जाऊँगा और तुम्हारे ऊपर बड़ी भारी विपत्ति आ जायगी। मेरे सिर में बड़ा दर्द है। तुम तुरन्त हथौड़ा उठाओ और मेरे सिर पर मार-मारकर मेरा दर्द दूर करो।"

"यहाँ कौन वह अण्डा ला सकता है? और कोई क्या जाने कि सिर पर किस जगह पर उस अण्डे को

फोड़ने से तुम्हारा मस्तक फट सकता है ?" राजकुमारी ने कहा।

दानव के सिर में दर्द बढ़ता ही जा रहा था। उसने सिर पर एक जगह उँगली रखकर कहा, "इसी जगह भयंकर पीड़ा है और यही वह जगह है जहाँ अण्डा फोड़ने से मेरा सिर चूर-चूर हो सकता है।" राजकुमारी ने अपना बायाँ हाथ सहलाने के लिए उसके सिर पर रख दिया और ज्यों ही सहलाने लगी तो दानव को नींद आ गई। उसने अपनी आँखें मूँदी ही थीं कि राजकुमारी ने अपने दाहिने हाथ में जो वह अण्डा छिपा रखा था उस दानव के सिर पर ठीक जगह तड़ाक से पटक फोड़ डाला। अण्डे का फूटना था कि दानव का सिर खंड-खंड होकर बिखर गया। वह लड़खड़ाकर वहीं फ़र्श पर गिर पड़ा और तड़प-तड़पकर दम तोड़ने लगा।

किशोर ने झटपट अपना रूप धारण किया और कहा, "राजकुमारी, चलो, यहाँ से अब हम चल दें। हम शीघ्र ही तुम्हारे पिता के देश में पहुँचना चाहते हैं।"

तब दोनों ने मिलकर किसी प्रकार उस महल की एक खिड़की तोड़ डाली। किशोर ने कहा, "मैं बाज़

बनता हूँ और तुम मेरी गरदन अपनी बाँहों में कसकर लटक जाओ !" 'हे हरि ! बहरी' कहते ही किशोर एक विशाल बाज़ हो गया और राजकुमारी सहित उड़कर लौहित्य सागर के पार आया। फिर वहाँ से उसने राजा के पास ख़बर भिजवाई और राजा ने तुरन्त कितने ही सवार और दो पालकियाँ रवाना कीं। दस-पाँच दिन में वे दोनों राजी-खुशी राज-सदन में पहुँच गए।

राजा-रानी और राजकुमारी की बड़ी बहनों तथा किशोर के बड़े भाइयों और सारी प्रजा को किशोर और राजकिशोरी के लौटने से बेहद खुशी हुई। कितने ही दिन तक लगातार उत्सव मनाये गए और खूब दावतें चलती रहीं। फिर एक दिन राजा ने किशोर से कहा कि अब राजकुमारी के साथ उसका ब्याह हो जाना चाहिए। किशोर ने कहा, "अभी नहीं। राजकुमारी को उपयुक्त उपहार देने के लिए अभी मेरे पास कुछ नहीं है।" राजा ने उसे बहुत समझाया और कहा कि उसके लिए किसी चीज़ की कमी नहीं, क्योंकि विवाह में राजा स्वयं उन दोनों को बहुत बड़ा दहेज देगा। पर अपनी भावी पत्नी के लिए एक अलभ्य उपहार लाने के लिए वह बेचैन था। सो

एक दिन वह निकल पड़ा।

: ५ :

अपने धर्म-पिता मलद के यहाँ से कोई अद्भुत वस्तु लाने का विचार कर किशोर चलते-चलते कई दिन बाद संध्या समय मलद के निवास-स्थान के निकट जा पहुँचा। मलद के पास एक ऐसी विचित्र गाय थी जिसके सींगों को झाड़ने से हीरे टपकने लगते थे। उस समय एक चरवाहा अन्य पशुओं के साथ उस गाय को भी मैदान में चरा रहा था। किशोर ने चरवाहे के निकट जाकर उससे कहा, "क्यों भाई चरवाहे, तुम अभी से ऐसे बहरे हो गए हो? तुम सुन नहीं रहे हो कि मालिक तुम्हें कब से पुकार रहे हैं?" किशोर के ऐसा कहते ही चरवाहा तो मलद की हवेली में चला गया और इधर किशोर उस गाय को हाँक ले गया।

मलद की डाँट खाकर जब चरवाहा गायों के पास आया तो उसे न वह गाय ही दिखी और न किशोर ही। वह रात में गाय को देर तक ढूँढ़ता रहा और निराश हो जब वह सब पशुओं को लेकर हवेली में पहुँचा तो अपनी प्यारी गाय को न देख मलद के

क्रोध का ठिकाना न रहा। उसने समझ लिया कि किशोर के सिवा यह किसी और का काम नहीं हो सकता।

किशोर की लाई हुई गाय को देखकर उसके भावी ससुर और सास बहुत प्रसन्न हुए। राजकुमारी को भी यह उपहार बहुत भाया। राजा ने विवाह का दिन पक्का करने की आज्ञा दी। किन्तु किशोर ने कहा कि उसे अपने पूज्य ससुरजी के लिए भी तो एक उचित उपहार ले आना है। राजा-रानी और उसके भाइयों तथा छोटी राजकुमारी तक ने उसे अब कहीं और न जाने के लिए कहा, किन्तु किशोर फिर चल खड़ा हुआ। दों-तीन दिन में वह फिर मलद के यहाँ जा पहुँचा।

किशोर को यह बात मालूम थी कि मलद के पीने के लिए रात में उसकी खाट के नीचे पानी से भरा हुआ एक पीपा रखा जाता है। उस रात धीरे-धीरे खाट के नीचे पहुँचकर किशोर ने पीपे में चुपके से एक छेद कर डाला। सारा पानी बह गया। रात में जब प्यास लगने पर मलद ने पीपा उठाया तो उसे एकदम रिक्त पाया। वह बड़े ज़ोर-ज़ोर से अपनी पत्नी को आवाज़ देने लगा। बेचारी को पीपा भरने के लिए उसी दम नदी के किनारे जाना पड़ा। पर रात

घनी अँधेरी थी, इसलिए मलद की पत्नी ने रोशनी के लिए अपना चन्द्रमा दीवार पर लटका देने के लिए उससे प्रार्थना की।

मलद के पास एक छोटा-सा चन्द्रमा था, जिससे रात में दस योजन तक इतना उजाला फैलता कि चारों तरफ दिन-जैसा प्रकाश हो जाता था। मलद की स्त्री जब नदी के पास पहुँच गई और मलद झपकी लेने लगा, तो किशोर ने झटपट दीवार पर से उस चन्द्रमा को उतार लिया और उसे अपने कपड़ों में छिपाकर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। उधर अँधेरे में जादूगरनी अपना पीपा ही तोड़ बैठी और मलद आधी रात तक पानी के लिए तरसता रहा।

सबेरा होते-होते दौड़ता-भागता किशोर मलद की सीमा के बाहर निकल आया, और दूसरे दिन उस चन्द्रमा को लेकर राजा के महल में जा पहुँचा। जब उसने अपना उपहार रात में अपने ससुर के पास रख दिया तो राजा-रानी को अपने भावी जामाता की शक्ति और बुद्धि पर बड़ा हर्ष और गर्व हुआ। फिर क्या था? सबसे सुन्दर छोटी राजकुमारी का किशोर के साथ बड़े उत्सव और आनन्दसहित विवाह हुआ। अब किशोर किशोर नहीं, राज-किशोर कहलाने लगा।

उसी छोटे चन्द्रमा की जुन्हाई में कितनी रातें विवाहोत्सव के भोज-भात, श्रामोद-प्रमोद तथा नृत्य-गान में बिताई गईं ।

सुनहरी मछली और तीन कुमार

: १ :

बहुत पुराने युग में जबकि बड़े-बड़े नगर नहीं बसे थे, और इन्सान जानवरों से इतना दूर नहीं हुआ था, उस काल की यह कहानी है। उस समय जानवर, चाहे वे जलचर, थलचर या नभचर हों, आदमियों की ज़बान समझते और आदमी भी उनकी बातें समझ लेता था।

बड़े दूर देश के एक गाँव में एक मछुआ अपनी स्त्री के साथ एक झोंपड़ी में रहता था। वह दिन-भर नदी में मछलियों का शिकार करता, और जो कुछ मछलियाँ पकड़ लाता उन्हें बेचकर अपनी गुज़र करता था। इस रोज़गार से दोनों का बड़ी कठिनाई से खाना-पीना-भर चल जाता था। खा-पीकर उनके पास कुछ नहीं बचता था, इसलिए वे बड़े ग़रीब थे।

एक दिन की बात है कि मछुए को दिन-भर शिकार करते रहने पर भी कोई मछली न मिली। सन्ध्या-समय उदास होकर जब वह घर लौटने का विचार कर रहा था, एक मोटी-सी सुनहरी मछली जाल में

आ फँसी। उसे बाहर निकाल ज्योंही मछुआ पिटारी में रखने लगा, मछली बोल पड़ी, "मछुए, मछुए! मुझको छोड़ दे। मैं तेरी अभिलाषा पूरी करूँगी।"

मछुए ने मछली को छोड़ दिया और मछली पानी के भीतर चली गई। खाली हाथ घर लौटकर जब मछुए ने अपनी पत्नी से सब हाल कहा तो वह उसे फटकारने लगी और बोली,"दुनिया में तुम्हारे-जैसा घामड़ और कौन होगा जो हाथ में आई मछली को पानी में छोड़ दे? इस दिमाग़ से कैसे दिन कटे?" अपनी स्त्री की फटकार और क्रोध को चुपचाप सहकर मछुआ उदास हो लेट गया। रात में उसकी पत्नी ने न उससे खाने के लिए पूछा और न उसने माँगा ही।

मछुआ दूसरे दिन शिकार के लिए गया तो फिर वैसा ही हुआ। सारे दिन उसे एक भी मछली न मिली। अन्त में शाम होने पर जब वह घर चलने की सोच रहा था, जाल में वही सुनहरी मछली फिर आ फँसी। मछुए ने जब उसे अपनी पिटारी में रखना चाहा तो वह फिर बोली, "मछुए, मछुए! मुझको छोड़ दे, मैं तेरी अभिलाषा पूरी करूँगी।" यह सुनकर मछुए ने उसे फिर छोड़ दिया और खाली हाथ घर लौटा। उसकी पत्नी ने उसे खाली हाथ लौटा

देख बड़ा क्रोध किया। सुनहरी मछली को फिर छोड़ देने की बात सुनकर उसने अपना माथा पीट लिया। बेचारे मछुए को वह रात भी भूखा रहकर बितानी पड़ी।

तीसरे दिन वह फिर नदी के किनारे शिकार करने गया तो संयोग से वही सुनहरी मछली फिर आ फँसी। इस बार मछुए ने मछली के कहने पर तनिक भी ध्यान न दिया, और उसे अपनी झपोली में डाल दिया। तब सुनहरी मछली ने कहा, "मछुए, आखिर मेरी बात तेरी समझ में नहीं आई। तू जो माँगता मैं तुझे वही देती, पर तू तो अभागा है। अब जो तू मुझे पकड़कर ले जा रहा है, तो यह जान ले कि तुझे क्या करना है। घर पहुँचकर मेरा सिर पकाकर अपनी घोड़ी को, पूँछ कुतिया को और बाकी हिस्सा अपनी पत्नी को खिला देना। फिर समय पाकर तीनों के तीन-तीन बच्चे होंगे। तेरे तीनों पुत्र एक-रूप, एक-रंग, एक-स्वभाव और एक ही विचार के होंगे। घोड़ी और कुतिया के तीनों बच्चे भी हूबहू अपने भाइयों की ही तरह होंगे। सयाने होने पर तेरे बच्चे विदेश जायँगे और किसी एक पर जब कोई भारी बिपत पड़ेगी तो तेरे पिछवाड़े वाले तालाब का पानी खौलने लगेगा।"

इतना कहकर सुनहरी मछली बेजान हो गई। मछुए ने घर आकर अपनी पत्नी से सारा हाल कहकर उस मछली को उसके सामने धर दिया। मछुए की पत्नी ने मछली को पकाकर उसका ठीक वैसा ही वितरण किया जैसा कि उसके पति ने कहा था।

: २ :

समय पाकर मछुए की पत्नी ने हूबहू एक ही जैसे तीन पुत्रों को जन्म दिया। घोड़ी ने एक ही रंग के तीन बछेड़े और कुतिया ने एक जैसे तीन पिल्ले जने।

थोड़े दिनों में तीनों कुमार सयाने हुए। तब उनमें से एक ने विदेश जाने की चर्चा शुरू की। पहले तो उसके माँ-बाप राजी न हुए, पर जब उसने ऐसी ज़िद पकड़ ली कि कई दिन खाना-पीना भी न किया तो मजबूर होकर माँ-बाप ने उसे विदेश जाने की अनुमति दे दी।

अपने घोड़े की पीठ पर सवार हो पीछे अपना कुत्ता लिये कुमार घर से निकल पड़ा। जाते समय उसके पिता ने उसे एक लम्बी तलवार दे दी। कई दिन तक लगातार चलते-चलते उसे एक नगर दिखाई पड़ा। नगर पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई और सराय में

जाकर उसने मुकाम किया।

सराय में थोड़ी ही देर रहने के बाद उसका जी ऊब गया, क्योंकि वहाँ जिस किसी को देखिये वही दुखी और उदास था। यह देख उसे बड़ी चिन्ता हुई और उसने सराय के मालिक से पूछा, "भाई, बात क्या है? यहाँ तो जिस किसी को देखिये वही मुँह लटकाये हुए है?"

"क्यों नहीं हम मुँह लटकायें साहब! आपकी तरह हम परदेशी तो हैं नहीं कि अपने राजा के दुख में दुखी न हों," सराय वाले ने कहा।

"भाई, अब तो हम भी आपके नगर में आ गए हैं, इसलिए हमें भी बतलाइए कि यहाँ विषाद की ऐसी घटा किस कारण छाई हुई है? अब तो हमें भी आपके सुख में सुखी और दुख में दुखी होना है।" कुमार ने कहा।

तब सराय वाले ने कहा, "इस नगर के दक्षिण में जो पर्वत है उस पर सात मुखों वाला एक अजगर रहता है। उस अजगर के भोजन के लिए प्रत्येक दिन एक प्राणी ज़रूर भेजना पड़ता है। कल सवेरे किसे भेजा जायगा इसका निर्णय करने के लिए आज दो-पहर में गोटी जो फेंकी गई तो वह राजा की इकलौती

कुमारी के नाम पड़ी। अब कल बड़े सवेरे ही बेचारी राजकुमारी उस अजगर का आहार बनने के लिए भेजी जायगी। इसी कारण आज नगर-भर में शोक छाया हुआ है।" यह बात सुनकर कुमार भी बहुत दुखी हुआ और जो कुछ रूखा-सूखा भोजन सराय में उसे मिला, खाकर चुपचाप एक जगह पड़ रहा।

कुमार को रात-भर नींद न आई। फिर जब रात कुछ बाकी ही थी, वह घोड़े पर सवार हो साथ में अपना भयंकर कुत्ता ले पहाड़ की तरफ रवाना हुआ। वहाँ पहुँचा ही था कि सबेरा हो गया। इतने में एक घोड़ागाड़ी उधर आई। कोचवान ने वह गाड़ी और उसमें बैठी सवारी को तो वहीं छोड़ दिया, पर गाड़ी से घोड़ों को मुरकाकर कहीं और ले गया। यह देख कुमार गाड़ी के समीप पहुँचा। उसमें एक अत्यन्त रूपवती बाला को उदास बैठी देख वह बहुत दुखी हुआ। घोड़ा-गाड़ी का दरवाज़ा खोलने की कुञ्जी अन्दर ही लगी थी। कुमार ने राजकुमारी से दरवाज़ा खोलने के लिए कहा, परन्तु राजकुमारी ने दरवाज़ा नहीं खोला, वरन् उसने उसे वहाँ से शीघ्र भागकर कहीं चले जाने के लिए कहा। तब कुमार ने अपनी तलवार से गाड़ी के दरवाज़े को स्पर्श किया। तत्काल दरवाज़ा खुल गया और कुमार

गाड़ी में जाकर राजकुमारी की बगल में बैठ गया। राजकुमारी नहीं जानती थी कि उस युवक को अजगर की बात मालूम है, इसलिए घबराहट के साथ उसने अपने ऊपर शीघ्र आने वाली बिपत का ब्यौरा उससे कह सुनाया। यह सब सुनकर बड़ी शांति के साथ कुमार ने कहा, "राजकुमारी, जैसे एक को मरना है वैसे ही दूसरा भी मरेगा।" फिर उसने राजकुमारी से अपने कानों की तरफ देखने को कहा। राजकुमारी जब उधर देखने लगी तो कुमार ने धीरे से उसकी पोशाकों का एक-एक टोंका काटकर जतन से अपने पास रख लिया। राजकुमारी ने एक-से-एक बढ़कर सुन्दर सात पोशाकें पहन रखी थीं।

इसी समय पहाड़ के ऊपर से कोई चीज़ आँधी की तरह लुण्ड-मुण्ड नीचे उतरती हुई दिखाई पड़ी। कुमार गाड़ी में से फौरन बाहर आकर अपने घोड़े पर सवार हो गया और उसी तरफ तेज़ी से बढ़ा। तब तक वह सात मुखों वाला अजगर सामने आ गया। सीटी बजा-कर कुमार ने अपने कुत्ते को संकेत किया। कुत्ता एक-दम अजगर के ऊपर झपट पड़ा। उधर घोड़े ने भी अपनी टापों से अजगर को रौंदना शुरू किया। राज-कुमारी गाड़ी में बैठी यह भयानक युद्ध देखती रही।

कुमार ने थोड़ी ही देर में अपनी तलवार से अजगर के पाँच सिर काट डाले। एक सिर कुत्ते ने काटकर अलग कर दिया और एक सिर घोड़े ने अपनी टापों से कुचल-कर अलग कर दिया था। फिर कुमार ने घोड़े पर से उतर, अजगर के सातों मुँह खोलकर सब जीभें काट डालीं, और उन्हें एक रूमाल में बाँधकर अपने पास रख लिया।

कुमार ज्योंही घोड़े पर चढ़ने लगा, राजकुमारी ने उसे आवाज़ दी और अपने साथ राजभवन में चलने के लिए कहा, किन्तु वह घोड़ा बढ़ाकर तेज़ी से वहाँ से चला आया। अपनी सराय में पहुँच, घोड़े को घास डालकर वह अपने कमरे में आराम करने लगा। उधर गाड़ीवान राजकुमारी को समाप्त समझकर गाड़ी वापस ले जाने के लिए अपने घोड़े लेकर आया, तो अजगर को मरा देख भारी अचरज में पड़ गया। फिर मारे खुशी के काँपते हाथों से रास पकड़े बड़ी तेज़ी से गाड़ी भगाता हुआ वह राजकुमारी को लेकर राजा के महल में जा पहुँचा।

राजकुमारी को जीवित वापस देख राजसदन और सारे नगर में आनन्द की बधाइयाँ बजने लगीं। मंगल-सूचक बाजे बजने से चारों दिशाएँ गुन्जरित हो उठीं।

राजा ने सारे शहर में डौंडी पिटवा दी कि जिसने अजगर को मारकर राजकुमारी का उद्धार किया है, वह महल में आये और राजकुमारी के साथ विवाहित होने का गौरव और आनन्द प्राप्त करे।

राजकुमारी के पहाड़ के नीचे से चले आने के पश्चात् उसी पहाड़ की तरफ एक कोयला बेचने वाला आ निकला था। उसने अजगर को मरा देख उसके सातों कटे सिर उठाकर अपने पास रख लिए थे। नगर में आने पर जब उसने राजा की डौंडी पिटती सुनी तो अजगर के सिरों वाली गठरो लिये हुए वह सीधे राजा के महल में पहुँच गया। राजा ने अजगर के सिर देख-कर उसके कहने पर विश्वास कर लिया और उसी दम राजकुमारी के विवाह की तैयारी करने का हुक्म दे दिया।

सन्ध्या-समय राजसदन में एक बड़ी भारी दावत दी गई। चारों तरफ आतिशबाज़ी छूट रही थी, नाच-गान की कई टोलियाँ जगह-जगह जुटी हुई थीं, भोजन के लिए कई सौ मेहमान जुटे हुए थे। उसी भीड़-भाड़ में एक जगह कुमार भी खड़ा था। अचानक राजकुमारी की निगाह कुमार पर जा पड़ी। फिर तो वह आपे से बाहर होकर कुमार की तरफ अपनी उँगली उठाकर

अपने पिता से बोली, "महाराज, महाराज ! अजगर से मेरी जान बचाने वाला आदमी वहाँ खड़ा है।"

ऐसे अवसर पर राजकुमारी का यह उद्गार राजा को बहुत नागवार लगा। उसने राजकुमारी के कहने पर विश्वास नहीं किया और क्रुद्ध होकर उसे चुप रहने के लिए कहा। परन्तु जब राजकुमारी ने बहुत हठ की तो राजा ने उस आदमी को अपने निकट आने का इशारा किया और उसके पास आने पर पूछा कि क्या बात है ? कुमार ने महाराज से प्रार्थना की कि नगर के सात सबसे बड़े दरजियों और सात होशियार कसाइयों को बुलाया जाय तो सारा भेद खुल जायगा।

आज्ञा होते ही सात दरजी और सात कसाई बुलाकर सामने खड़े कर दिये गए। तब कुमार ने उन दरजियों के सामने राजकुमारी की सातों पोशाकों के कटे हुए टुकड़े रखकर पूछा कि क्या वे टुकड़े राजकुमारी के लिए सिले हुए सातों कपड़ों से कटे हुए नहीं हैं ? दरजियों ने राजकुमारी की उस दिन की पोशाकें मँगवाकर अच्छी तरह से मिलान किया और तब एक स्वर से कहा कि वे टुकड़े सच ही राजकुमारी की पोशाकों के ही हैं। तब कुमार ने कसाइयों से प्रश्न किया कि क्या उन्होंने कभी किसी ऐसे भी जानवर का वध किया है

जिसके मुँह में जीभ न मिली हो ? उन्होंने एक स्वर से कहा कि ऐसा कोई जीव उन्होंने अभी तक कभी नहीं देखा है। तब राजकुमार ने कोयला बेचने वाले जवान के लाये हुए मुखों में जीभ देखने के लिए कसाइयों से निवेदन किया। कसाइयों ने अजगर के कटे सिर में मुँह के भीतर लकड़ी डालकर बहुत कुरेदा परन्तु वहाँ किसी भी मुँह में जीभ नहीं थी।

राजकुमार ने अपना रूमाल, जिसमें सात जीभें रखी हुई थीं, सामने बढ़ाकर कसाइयों से कहा कि वे जीभों की जाँच करें। कसाइयों ने प्रत्येक को उठाकर और उन मुँहों में रखकर देखा। वे निस्संदेह उसी अजगर की जीभें थीं। तब तो सब लोगों को उस कोयलाफरोश पर बड़ा क्रोध आया और राजा ने उसे वहीं सबके सामने फाँसी पर लटकवा दिया।

उसी रात राजकुमारी के साथ कुमार का विवाह हो गया। ऐसे वीर और सुन्दर जवान को देखकर नगर-निवासी बहुत प्रसन्न थे। विवाह के बाद जब सब उत्सव समाप्त हो गए तो राजकुमारी और कुमार महल में शयन के लिए पधारे। शयनागार में राजकुमारी परमात्मा के अनुग्रह के लिए झुककर प्रार्थना पढ़ने लगी, और राजकुमार खिड़की के पास खड़ा हो बाहर

का दृश्य देखने लगा। उस समय चाँदनी दूध की चादर के समान चारों तरफ फैली हुई थी और रातरानी की भीनी-भीनी महँक से सारा वातावरण स्निग्ध हो रहा था। एकाएक राजकुमार को दूर पर एक महल दिखाई पड़ा जिसे उसने अब तक देखा नहीं था। अपनी पत्नी को इशारे से अपने निकट बुलाकर कुमार ने पूछा, "राजकुमारी, उस महल में कौन रहता है ?"

यह सुनते ही राजकुमारी सिहर उठी और अपनी आरक्त हथेलियों से राजकुमार की आँखें ढाँपती हुई बोली, "स्वामिन्, अब आप उधर तनिक न देखिये। उस महल में जाकर आज तक कोई लौटा नहीं है।"

परन्तु उस महल की तरफ निगाह जाते ही न जाने कौनसा जादू कुमार के सिर पर चढ़ गया कि वह उसी क्षण वहाँ जाने के लिए अधीर हो उठा। राजकुमारी ने उसके चरण पकड़ लिये और अत्यन्त दीनता और विनम्रता के साथ घर से बाहर न निकलने के लिए उससे विनती की। किन्तु होनहार बड़ा प्रबल होता है। राजकुमारी के लाख रोकने पर भी वह महल में न रुका। बाहर निकल, अपने घोड़े पर सवार हो, कुत्ते को साथ ले कुमार उस महल की तरफ चल पड़ा और थोड़ी देर में महल के पास जा पहुँचा। महल का फाटक

ढूँढ़ने के लिए उसने उसकी परिक्रमा कर डाली, पर फाटक कहीं न दीखा। बहुत ढूँढ़ने के बाद उसे एक छोटी-सी खिड़की ज़मीन से सटी हुई दिखाई दी। कुमार ने खिड़की में से झाँका तो क्या देखा कि एक बुढ़िया वहाँ बैठी हुई ऊँघ रही है। कुमार को देखते ही बुढ़िया ने पूछा कि वह वहाँ क्यों आया है? राजकुमार ने कहा कि बाहर से वह महल ऐसा सुन्दर दिखाई दिया कि उसे भीतर से देखने के लिए वह एकदम उत्कंठित हो उठा।

यह सुनकर बुढ़िया ने भीतर आने का संकेत किया। कुमार अन्दर चला गया। वहाँ उसने एक-एक कमरे में इतनी कीमती चीज़ें सजी देखीं, जितनी किसी राजा के पूरे महल में भी न होती होंगी। हर्ष और विस्मय से कुमार बेसुध हो गया। बुढ़िया भी एक लकुटी के सहारे उसके पीछे डुगर-डुगर डोल रही थी। कई कमरों में होता हुआ राजकुमार भोजनालय में पहुँचा, तो बुढ़िया ने उसे इशारे से एक कुरसी पर बैठ जाने के लिए कहा। राजकुमार कुरसी पर बैठ गया। उसने देखा कि वहाँ कमरे के मध्य में एक लम्बी-चौड़ी चौकी पर छप्पन प्रकार के भोजन रखे हुए थे और सोने-चाँदी के पात्रों में से गरमागरम भाप निकल रही

थी। बुढ़िया ने वहाँ से एक पुआ उठा कुमार के सामने रखकर मुँह मीठा करने के लिए कहा। राजकुमार को भूख कहाँ थी! उसने इन्कार किया, किन्तु बुढ़िया के बराबर आग्रह करने पर उसने एक टुकड़ा तोड़कर मुँह में रख लिया। उसे कूँचकर गले के नीचे उतार ही रहा था कि राजकुमार पत्थर हो गया, उसका कुत्ता भी पत्थर हो गया, घोड़ा बाहर बँधा-का-बँधा पत्थर हो गया।

दूर देश के गाँव में झोंपड़ी के पिछवाड़े वाली बावली का पानी खौल रहा था।

: ३ :

एकाएक बावली का पानी खौलते देख मछुआ और उसकी पत्नी को वह पुरानी बात एकदम याद आ गई। आज कितने ही वर्षों बाद उस सुनहरी मछली की स्मृति हरी हो उठी। मछुआ और उसकी स्त्री जल से बाहर काढ़ी हुई मछली के समान तड़पने लगे। माता-पिता की ऐसी अवस्था देख दो पुत्रों में से एक भाई की खबर लाने के लिए तैयार हो गया।

दूसरे दिन अपने घोड़े की पीठ पर सवार हो और साथ में अपना कुत्ता ले जब वह जाने लगा तो उसके

पिता ने उसे भी एक लम्बी तलवार दी। जिस दिशा में पहला कुमार गया था उसी तरफ यह दूसरा कुमार भी बढ़ चला।

कई दिन तक लगातार चलते-चलते उसे दूर पर रास्ते में एक तरफ एक नगर दिखाई दिया। कुमार ने उसी तरफ घोड़ा मोड़ा और संध्या-समय उस नगर में प्रविष्ट हुआ। संयोग से ठहरने के लिए वह उसी सराय में गया जहाँ कुछ दिन पहले उसका भाई ठहरा था। दोनों भाइयों के रूप, रंग, आकृति, स्वर तथा वेष-भूषा में ज़रा भी अन्तर न था, इससे सराय वाले ने यही समझा कि महाराज का कीर्तिवान् जामाता, जो कुछ दिन पहले अचानक राजकुमारी को छोड़ महल से चला गया था, वापस आ गया है। उसने तुरन्त महल में इस बात की ख़बर की। यह आनन्ददायक समाचार पाते ही राजकुमार को सम्मानसहित महल में लाने के लिए राजा ने कुछ आदमी रवाना किये। राजकुमार को यह अन्दाज़ा लग गया कि कहीं कुछ तो भ्रम है, परन्तु सब-कुछ समझ लेने के लिए कुछ समय तक मूक रहना ही उसने उचित समझा, बल्कि उन आदमियों ने जैसे-जैसे कहा उसने वैसे-वैसे ही किया।

कुमार के महल में पहुँचते ही खुशियाँ मनाई गईं।

राजकुमारी ने बाहर आकर उसका स्वागत किया। फिर मेहमानों और पुरजन तथा परिजनों के साथ देर तक चलने वाली दावत जब समाप्त हुई तो राजकुमारी अपने उतने दिनों बाद सहसा प्राप्त पति को संग लेकर शयनागार में चली गई।

शयनागार में पहुँचकर राजकुमारी तो भगवान् की कृपा हेतु उनकी स्तुति में झुककर प्रार्थना करने लगी और राजकुमार खिड़की के पास टहलने लगा। अचानक उसकी निगाह दूर टेकरी पर जगमगाते हुए उसी महल पर जा टिकी। एकटक देर तक उसे देखता-देखता राजकुमार बोला, "राजकुमारी, उस महल में कौन रहता है ?"

"स्वामिन्, यह तो आप जानते ही हैं कि वहाँ जो गया उसका लौटना कितना कठिन होता है, फिर आप उधर क्यों देख रहे हैं ?" राजकुमारी ने बहुत दीनता से कहा और अपनी कोमल हथेलियों से राजकुमार की आँखों को ढाँप दिया। पर राजकुमार ने उसी दम वह महल देखने की हठ पकड़ ली। राजकुमारी ने उसके चरण कसकर पकड़ रखे, और हर तरह से उसे रोक लेने की कोशिश की, पर उसने उसकी एक न सुनी और तत्काल अपने घोड़े पर बैठकर, कुत्ते को साथ ले

उस महल की तरफ चला गया।

वहाँ पहुँचने पर उसे वही बुढ़िया खिड़की के नीचे बैठी दिखाई पड़ी। कुमार को सामने खड़ा देख उसने पूछा, "यहाँ क्यों आये हो?"

"तुम्हारा महल देखने के लिए," कुमार ने कहा। "बाहर से तो यह महल बहुत ही सुहावना लगता है। न जाने भीतर से कैसा है?"

"अन्दर आकर देख लो न!" बुढ़िया ने कहा।

निदान अपने भाई की ही तरह इस कुमार ने भी महल में प्रवेश किया। भीतर जाकर एक कमरे से दूसरे कमरे तक महल की सजावट देखता, और वहाँ सजी हुई वस्तुओं की सराहना करता हुआ वह भी भोजन-गृह में पहुँच गया। फिर बुढ़िया के आग्रह करने पर भूखा न होते हुए भी उसे पुए का एक टुकड़ा मुँह में धर लेना पड़ा। और फिर तो पल-भर बाद अपने घोड़े तथा कुत्ते सहित वह भी पत्थर हो गया।

बावली का पानी फिर खौलने लगा।

यह देख मछुआ और उसकी पत्नी अपने पुत्र के लिए विलाप करने लगे। तीसरा भाई भी बहुत अधिक बेचैन हो गया। फिर वह अपने भाइयों की खोज में तत्काल चले जाने के लिए अपनी माता से आज्ञा माँगने

लगा। वह यह नहीं चाहती थी कि उसके तीन बेटों में से जो एक बचा है वह भी विदेश चला जाय और बुढ़ापे में उसका कोई सहारा ही न रहे। परन्तु तीसरे कुमार को इस बात का पूरा विश्वास था कि वह अपने दोनों भाइयों को अवश्य खतरे से उबारेगा, और उसके माता-पिता कदापि अनाथ न होंगे।

निदान उसके बहुत आग्रह करने पर माता-पिता राजी हुए, और तब एक दिन प्रातःकाल अपने घोड़े पर सवार हो वह उसी दिशा में रवाना हो गया जिस ओर पहले उसके दोनों भाई गये थे। उसका कुत्ता भी पीछे-पीछे चला गया। जाते समय उसके पिता ने उसे भी वैसी ही एक लम्बी तलवार दी जैसी कि उसने अपने दो पुत्रों को पहले दी थी।

कई दिन की यात्रा के बाद तीसरा कुमार सन्ध्या-समय उसी नगर की उसी सराय में पहुँच गया। सराय वाले ने उसे बड़े तपाक से बिठाकर उसके आगमन की खबर तुरन्त महल में भिजवाई। राजा ने उसे महल में लिवा लाने के लिए कई आदमी रवाना किये। फिर यह सोचकर कि उसका दामाद अपने पराक्रम से सभी बाधाओं को चूर्णकर सकुशल वापस आ गया है, उसने बड़े उत्सव और नाच-गान का आयोजन किया। आधी

रात तक दावत, राग-रंग और खेल-कूद चलते रहे। फिर राजकुमारी और राजकुमार शयनकक्ष में गये।

राजकुमारी पलंग पर लेटने के पूर्व नित्य नियम के अनुसार जब भगवान् की प्रतिमा के सामने शिर नवाकर प्रार्थना कर रही थी, राजकुमार खिड़की के निकट खड़ा होकर बाहर छिटकी हुई चाँदनी का अवलोकन करने लगा। अकस्मात् उसकी निगाह दूर टेकरी पर जगमगाते हुए एक महल पर पड़ी। देर तक उसे एकटक देखकर राजकुमार ने कहा, "राजकुमारी, यह महल किसका है?"

"राजकुमार, यह आप मुझसे क्यों पूछते हैं? आप यह जानते हैं कि उस महल में जाकर वहाँ से बाहर निकलना कितना कठिन होता है। फिर आप उधर देख क्यों रहे हैं?" राजकुमारी ने कहा।

राजकुमारी के ऐसा कहने से ही कुमार समझ गया कि उसके दोनों भाई पहले उस महल में जा चुके हैं, और हो न हो वे उसी महल में बन्द हैं। यह सोचकर वह उसी क्षण उस महल के भीतर जाने के लिए अधीर हो उठा। वह राजकुमारी से विलग होकर चलने लगा। राजकुमारी ने अपनी भुजाओं में उसके पैर जकड़ लिये, किन्तु वह उसके लाख कहने पर भी न रुका।

राजकुमार उस महल के समीप पहुँचकर बड़ी सावधानी से हर तरफ से उसका निरीक्षण करने लगा। बिना समझे-बूझे वह कहीं पैर नहीं रखना चाहता था। महल के पिछवाड़े जाकर उसने देखा कि एक छोटा-सा वैसा ही महल वहाँ और खड़ा है। थोड़ी ही देर बाद उस छोटे महल में से हाथ में एक थाल लिये एक बुढ़िया निकलकर बड़े महल की तरफ जाती दिखाई पड़ी। राजकुमार के इशारा करते ही उसके कुत्ते ने लपककर बुढ़िया की टाँग पकड़ ली। तब तो बुढ़िया रो-रोकर अपने प्राणों की भीख माँगने लगी। राजकुमार ने अपने कुत्ते को अलग कर लिया, तब बुढ़िया ने जल्दी-जल्दी इशारों में बताया कि उसकी बड़ी बहन, जो बड़े महल में रहती है, एक भयंकर डायन है। "तुम महल में जाना तो उसके लाख कहने पर भी वहाँ कोई चीज़ मुँह में न डालना, नहीं तो अपने घोड़े तथा कुत्ते सहित तुम भी पत्थर हो जाओगे। वहाँ जो खाने की चीज़ें रसोईघर में हों उनमें से कोई-न-कोई चीज़ बुढ़िया को ज़बरदस्ती ज़रूर खिला देना।"

यह कहकर वह बुढ़िया जो आगे बढ़कर महल के पास पहुँची तो अचानक महल की दीवार में एक छेद हो गया और वह उसमें पैठकर अन्दर हो गई। उसके

पैठते ही वहाँ से वह दीवार फिर ज्यों-की-त्यों हो गई। यह दृश्य देख राजकुमार को बड़ा अचम्भा हुआ; किन्तु वह सजग हो चुका था, इसलिए निर्भय होकर महल की परिक्रमा करने लगा। अचानक उसे एक जगह थोड़ा-सा प्रकाश दिखाई दिया। वहाँ जाकर उसने देखा कि ज़मीन से लगी हुई एक खिड़की है और उसके भीतर बैठी एक बुढ़िया चरखा कात रही है। राजकुमार ने समझ लिया कि वह बुढ़िया यही है जिसकी छोटी बहन से उसकी मुलाकात हुई थी। कुमार ने बड़ी विनम्रता से उसे नमस्कार किया।

"क्यों, इधर कहाँ आ निकले हो तुम ?" बुढ़िया ने पूछा।

"तुम्हारा महल देखने," राजकुमार ने कहा, "बाहर से यह ऐसा लुभावना है कि भीतर से देखने की इच्छा अनायास हो ही जाती है।"

"तो आ जाओ भीतर," बुढ़िया ने कहा।

निदान राजकुमार अपने कुत्ते के साथ खिड़की से होकर महल के भीतर घुसा। वहाँ एक कमरे से दूसरे कमरे में टहलने लगा। बुढ़िया भी उसके पीछे-पीछे लकड़ी टेकती हुई डोलती रही, और जब महल में कई घंटे तक घूमकर भी राजकुमार भोजनालय में न आया

तो बुढ़िया थककर एक जगह बैठ गई। राजकुमार ने उसके पास आकर उसे उठा लिया और सहारा देकर उसे भोजन वाले कमरे में ले आया। वहाँ जब दोनों बैठ गए तो बुढ़िया राजकुमार को कुछ भोजन करने के लिए आग्रह करने लगी। "पहले तुम तब हम," राजकुमार ने कहा। बुढ़िया कहती कि उसे भूख नहीं, राजकुमार कहता कि उसे तनिक भी भूख नहीं। इतने में चौकी पर भोजनों के थाल देखकर राजकुमार का का कुत्ता गुर्राने लगा। राजकुमार ने बुढ़िया से कहा, "जल्दी कुछ खाकर थोड़ा मुझे और मेरे कुत्ते को भी दो, नहीं तो भूखा कुत्ता अब तुम्हें खाकर ही अपनी भूख शान्त करेगा।"

बुढ़िया कुछ भी हाँ-ना नहीं कर रही थी। उसे इस तरह समय बरबाद करते देख राजकुमार ने इशारा किया तो कुत्ते ने बुढ़िया के सामने डटकर गुर्राना शुरू किया। बुढ़िया घबराकर काँपने लगी। उसी समय राजकुमार ने पुए का एक टुकड़ा तोड़कर बलपूर्वक उसके मुँह में डाल दिया। बुढ़िया उसे मुँह में से उगलना ही चाहती थी कि राजकुमार ने कसकर उसका मुँह बन्द कर दिया। थोड़ी ही देर में बुढ़िया के सिर से धुआँ फूटता हुआ दीख पड़ा। राजकुमार

उसके पास से हटकर थोड़ा पीछे खड़ा हो गया। शीघ्र ही बुढ़िया की लटों से आग की लपटें निकलने लगीं और देखते-देखते वह छण भर में जलकर खाक हो गई।

उसी क्षरण महल के कोने से खिलखिलाहट और हँसी के स्वर फैलने लगे। फिर महल के अन्दर बन्द कमरों के द्वार टूट-टूटकर गिरने लगे और उन कमरों में से निकल-निकलकर न जाने कितने राजकुमार, राजकुमारियाँ और राजे-महाराजे सभा-भवन में इकट्ठे हो गए। उसी समुदाय में अपने दोनों भाइयों को उनके कुत्तों सहित देखकर राजकुमार हर्षातिरेक से चिल्ला उठा। वे उसके पास आ गले से लिपट गए।

वहाँ एकत्र सभी राजकुमारों और राजकुमारियों ने एक स्वर से तीसरे कुमार को उस महल का स्वामी स्वीकार किया और उन राजकुमारियों में जो सर्व-सुन्दरी थी, उसने उसके गले में वरमाला डाल दी।

जब राजा को यह समाचार मिला तो उन्होंने अपने मंत्री को भेजकर उन सभी राजकुमारों और राजकुमारियों को अपने यहाँ दावत में बुलाया। हूबहू एक ही गठन और रूप-रंग के तीन-तीन राजकुमारों को देख राजा और उसके समस्त सभासद हैरान थे। सब

को परेशान और राजकुमारी को म्लान देख उसने—जिसने सतमुखे अजगर को मारा था—आगे बढ़कर अपनी पत्नी का हाथ ग्रहण कर लिया, और अपने ही समान उन दो राजकुमारों की ओर संकेत करके कहा, "प्राणेश्वरी, ये दोनों हमारे सहोदर हैं।" उन कुमारों ने अपनी भाभी को सादर अभिवादन किया।

राजा ने अपने जामाता को अपना महल और राज्य दे दिया और दूसरे राजकुमार के लिए अपने ही महल-जैसा सुन्दर और विशाल एक दूसरा महल बनवा दिया। तीसरा राजकुमार जादुई महल के जादू को तोड़कर सम्पूर्ण सम्पत्तिसहित उसका स्वामी हो ही चुका था। दूसरे राजकुमार के लिए भी एक प्रसिद्ध राजा की राजकुमारी ब्याह कर लाई गई।

इस प्रकार उस सुनहरी मछली के अंश से ज्योतिर्मय वे तीनों राजकुमार अपनी रानियों के साथ सुख से अपने महलों में अपने घोड़े और कुत्ते सहित निवास करने लगे।

कुछ दिनों बाद उन्होंने अपने वृद्ध माता-पिता को भी वहीं बुलवा लिया और वे बारी-बारी से चार-चार महीने अपने तीनों बेटों और बहुओं के साथ आनन्दपूर्वक निवास करते थे।

अनूप और अनूपा

: १ :

बहुत पुराने समय की बात है, किसी गाँव में एक गरीब विधवा रहती थी। एक पुत्र के अतिरिक्त संसार में उसका दूसरा कोई नहीं था। समय पाकर जब विधवा का पुत्र सयाना हुआ तो अपनी गरीबी से ऊब-कर कमाने के लिए परदेश जाने का विचार उसके मन में प्रतिदिन उठने लगा। अपने इकलौते बेटे के वियोग की कल्पना से बुढ़िया का मन अधीर हो जाता, किन्तु लड़का बारम्बार यही कहता, "माँ, गरीबी का जीवन भी कोई जीवन है !" और यह सुनकर उसकी माता का कलेजा दो टूक हो जाता था। अन्त में वह विधवा राजी हो गई और उसका जवान बेटा परदेश के लिए चल खड़ा हुआ।

कई दिन चलते-चलते वह जवान एक वीरान जंगल में पहुँचा। वहाँ उसे सारे दिन किसी आदमी के दर्शन न हुए। दिन बीत जाने पर जब संध्या हो गई और रात तेज़ी से आने की तैयारी करने लगी, उस समय

साफ़-सुथरे वस्त्र पहने एक आदमी उसे दिखाई पड़ा। पास पहुँचने पर उसने पूछा, "कहो जवान, इधर कहाँ जा रहे हो ?"

"रोज़ी-रोज़गार की खोज में घर से निकला हूँ बाबा !" युवक ने उत्तर दिया।

"नौकरी तो मेरे यहाँ भी खाली है। चाहो तो मेरे यहाँ चलो।" उस भले आदमी ने कहा।

अनूप राजी हो गया। वह भलामानुस उसे संग लेकर एक बहुत सुन्दर हवेली में आया। हवेली के अन्दर जाकर उसने अनूप को भोजन कराया, और फिर अपने घर की समस्त कुंजियाँ उसे सौंपकर बोला, "जवान, मैं एक लम्बी यात्रा पर जा रहा हूँ, और जब तक लौटकर न आऊँ तुम इस मकान की रखवाली करना। मैं यह सारा घर तुम्हारे ऊपर छोड़कर जा रहा हूँ। तुम्हारे लिए यहाँ किसी चीज़ की कमी न होगी। लौट आने पर मैं तुम्हारा सारा वेतन अच्छे इनाम के साथ इकट्ठा दे दूंगा। पर याद रखना, हमारे इन घोड़ों को खाने-पीने की कभी तकलीफ़ न होने पाए।"

इतना कहकर वह अनूप को घुड़साल में ले गया और अपने घोड़ों की गिनती कराई।

मालिक के चले जाने पर अनूप ने समूचे घर का कोना-कोना देख डाला। अस्तबल में जाकर फिर से सब घोड़ों की गिनती की और बहुत प्रसन्न हुआ। दूसरे दिन जब वह फिर अस्तबल में गया तो किसी ओर से उसके कानों में आवाज़ आई, "अनूप, मेरे बन्धन खोलकर तू मुझे यहाँ से बाहर कर दे। यह उपकार करके तू घाटे में नहीं रहेगा।"

अनूप ने चारों तरफ नज़र दौड़ाई, पर कहीं कोई दिखाई नहीं दिया। दूसरे दिन उसे फिर उसी आवाज़ में ये शब्द सुनाई पड़े, "सफेद घोड़ी के पास आ जा, अनूप ! वही तो बोल रही है।" तब अनूप उस घोड़ी के पास गया। पर उसे बाहर निकाल देने के लिए वह राजी न हुआ। घोड़ी ने उससे कहा, "कोई बर्तन ले आ, और मैं जब उसे भर दूँ तो तू अपने हाथ और सिर उसमें धो डाल।"

सफेद घोड़ी की शक्तियों की परीक्षा लेने के लिए अनूप एक कठौता ले आया और घोड़ी ने जैसा कहा था वैसा ही किया। सिर और हाथ धोते ही अनूप के आश्चर्य की सीमा न रही। उसके हाथ और सिर सोने की कान्ति से भी अधिक दीप्त हो उठे। अपने अंगों के इस प्रकार के परिवर्तन के कारण उसे बड़ी उलझन

हुई और उसने श्वेत अश्विनी से कहा कि उसे उतने चमकीले हाथ नहीं चाहिए। हाँ सिर का चमकीलापन तो कपड़े से ढाँपकर वह छिपा सकता है। यह सुनकर सफेद घोड़ी ने कहा कि उसी बर्तन में फिर से हाथ धो डालने पर वे पहले जैसे हो जायँगे। अनूप ने अपने हाथ उसी कठौते में फिर धोए और वे ठीक वैसे ही हो गए जैसे पहले थे।

दिन, महीना, साल आते और जाते बहुत सा समय बीत गया। फिर एक दिन सफेद घोड़ी ने पूछा, "अनूप, क्या तू बता सकता है कि मालिक को गये कितने दिन हो गए ?"

"मुझे ठीक मालूम नहीं," अनूप ने कहा, "शायद छः महीने हुए हों, या शायद एक वर्ष ही हो गया हो।"

"नहीं अनूप, पूरे छः वर्ष समाप्त हो चुके हैं। अब अगर मालिक एक वर्ष और न आया और सात वर्ष पूरे हो गए, तो तुम भी उसके जादू में फँसकर हम लोगों की ही तरह एक अश्व बन जाओगे। हमारा मालिक असाधारण जादूगर है।"

घोड़ी की बात सुनते ही अनूप के पैर के नीचे की धरती खिसक गई। अब वह श्वेत अश्विनी को मुक्त कर देने के लिए राजी हो गया। फिर तो एक

दिन वह उसकी पीठ पर बैठकर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। कुछ घण्टे के बाद घोड़ी ने अनूप से पूछा कि पीछे कुछ दिखाई तो नहीं दे रहा था। अनूप ने मुड़कर पीछे की तरफ देखा तो थोड़ी दूर पर एक बड़ा भयानक दानव उनकी ही तरफ मुँह खोले तेज़ी से चला आ रहा था। अनूप बहुत डरा, परन्तु घोड़ी ने उसे निर्भय और निश्चिन्त रहने के लिए कहा। फिर श्वेत अश्विनी ने ज़मीन पर ज़ोर-ज़ोर से टाप मारकर कहा, "धरती माता, धरती माता ! हमारे और जादूगर के बीच एक घना कुहरा फैला दो !" घोड़ी के ऐसा कहते ही पीछे अँधेरी रात के समान कुहरा छा गया। तब तो अनूप और श्वेताश्विनी दोनों निश्चिन्त होकर तेज़ी से अपने मार्ग पर अग्रसर हुए।

कई घण्टे बाद श्वेताश्विनी ने अनूप से फिर पीछे मुड़कर देखने के लिए कहा। अनूप ने पीछे मुड़कर देखा तो एक विशालकाय दानव को आग फेंकते अपनी ही तरफ सपाटे से आते हुए पाया। वह इस बार खूब डरा और समझने लगा कि अब दोनों जल-भुनकर स्वाहा हो जायँगे। किन्तु श्वेताश्विनी ने उसे ढाढस बँधाया और फिर टाप ज़मीन पर दो-तीन बार मारकर कहा, "धरती माता, धरती माता ! आग्नेय दानव और हमारे बीच

बादलों से ओलों की घनघोर वर्षा शुरू कर दो !" घोड़ी का इतना कहना था कि दानव पर आसमान से ओले और पानी की घनघोर वर्षा होने लगी और वे दोनों ही निश्चिन्त होकर आगे बढ़े। बीच-बीच में अनूप पीछे मुड़कर देख लिया करता था।

कई घण्टे की यात्रा के बाद अनूप ने जो पीछे मुड़-कर देखा तो वह फिर डरकर काँपने लगा। घोड़ी के पूछने पर उसने बतलाया कि दानव बिलकुल निकट आ पहुँचा है, और इस बार उससे बचना कठिन जान पड़ता है। घोड़ी ने कहा, कुछ हर्ज़ नहीं और जमकर दो-तीन बार ज़मीन पर पैर पटककर बोली, "धरती माता, धरती माता ! हमारे और दानव के बीच एक ऐसी तेज़ धारा वाली नदी बहा दो जिसमें यह दानव डूब मरे !"

घोड़ी के इतना कहते ही पीछे एक भयंकर नदी बहने लगी और वह दानव सचमुच उसमें डूबकर मर गया। अनूप तथा श्वेताश्विनी दोनों निश्चिन्त होकर आगे बढ़े।

: २ :

कई घण्टे चलने के बाद जिस समय वे एक अद्भुत

और सुरम्य उपत्यका में पहुँचे, तो श्वेताश्विनी ने अनूप से अपनी पीठ पर से उतरकर आराम करने के लिए कहा। अनूप उसकी पीठ पर से उतरकर एक पेड़ की शीतल छाया में बैठ गया। कुछ देर आराम कर लेने के बाद श्वेताश्विनी ने अनूप को सम्बोधन करके कहा, "मेरे त्यारे मित्र और सखा, अब यहाँ से तुम्हारा और हमारा रास्ता अलग हो रहा है। सामने वाली पहाड़ी पार करके सीधे मार्ग से जाने पर तुम एक बड़े सुन्दर नगर में पहुँच जाओगे, जहाँ तुम्हें ईमानदारी और बहादुरी के साथ निःस्वार्थ-भाव से महान् कार्य करने पर भी बराबर कष्ट, अपयश और अपमान का ही पुरस्कार मिलेगा। किन्तु अन्त में तुम्हें अतिशय सम्मान और श्रद्धासहित सब लोग उस नगर का राजा बनायेंगे।

"आज नगर में पहुँचते ही तुम सीधे राजा के महल में चले जाना, और पूछना कि क्या वहाँ माली की कोई नौकरी खाली है? वे लोग तुम्हें राज-वाटिका की बागवानी के लिए नौकर रख लेंगे। बगीचे के कोने में रहने के लिए तुम्हें जो कोठरी मिलेगी उसमें तुम आराम से बने रहना। तुम्हारा बागवानी का काम जितना तुम कर सकोगे उससे भी अधिक और अच्छा अपने-आप होता जायगा। तुम्हारी क्यारियों में रोज़ तीन ऐसे-

ऐसे फूल खिला करेंगे जैसे कि सारे बाग़ में कहीं न होंगे। तुम बड़े तड़के वे तीनों फूल लेकर महल में चले जाया करना और एक-एक फूल प्रत्येक राजकुमारी को समर्पण कर देना। किन्तु स्मरण रखना कि जो सबसे अच्छा हो वह फूल सबसे छोटी राजकुमारी को ही दिया करना।"

इतना कहकर श्वेताश्विनी दाहिनी तरफ चली गई, और अनूप भी सामने वाली पहाड़ी पार करके नगर में राजा के महल में जा पहुँचा। वहाँ उसे बागवान की नौकरी मिल गई। अपनी नौकरी पर अनूप श्वेता-श्विनी के कहे अनुसार रहने लगा। रोज़ सबेरे तीन अद्भुत फूल उसकी क्यारियों में खिलते, और वह उन्हें राजकुमारियों को दे आता था।

उस राजा के यहाँ सब नौकरों को महल के रसोई-घर से ही भोजन मिलता था। घर के प्राणी, उसके मित्र आदि तो महल के अन्दर बैठकर एक साथ भोजन करते ही, प्रत्येक नौकर का खाना भी उसकी कोठरी में भेजा जाता था। छोटी राजकुमारी को बागवान अनूप पहले ही दिन से बहुत भा गया था, इसलिए उसका भोजन लेकर वह स्वयं उसकी कोठरी में जाया करती थी। एक दिन राजकुमारी ने अनूप से कहा कि वह

अपना विवाह उसके साथ करना चाहती है। अनूप ने उत्तर दिया, "जो आदमी एकदम निर्धन हो, और जिसके खानदान का कुछ पता ही न हो, ऐसे आदमी के साथ एक राजकुमारी के विवाह की बात क्या निरा पागलपन नहीं है ?"

कुछ दिन बीतने पर राजकुमारी बहुत बीमार हुई। राजा ने तत्काल राजवैद्य को बुलाकर उसकी नाड़ी दिखवाई। वैद्य ने कहा कि राजकुमारी को कोई ख़ास रोग नहीं है, थोड़ा उद्वेग है। वैद्य के चले जाने पर राजा ने अपनी बेटी से कहा, "तुम्हें कुछ हुआ तो नहीं है।" राजकुमारी ने कहा, "ठीक तो है। बागवान् से कहिये कि नये फूलों से सुवासित करके कुछ यवागू (शोरवा) मेरे पीने के लिए तैयार कर लाए। उसे पीकर मैं पहले ही की तरह स्वस्थ हो जाऊँगी।"

राजा की आज्ञा हुई। अनूप को अच्छे कपड़े पहनाये गए। राजा के कहने से वह शोरवा लेकर आया। महल की नौकरानियों में एक चुड़ैल बुढ़िया भी थी, जिसे राजकुमारी की बात में कुछ रहस्य जान पड़ा था। इसलिए अनूप और राजकुमारी की बात सुनने के अभिप्राय से अनूप के शोरवा लेकर आने से पहले ही वह राजकुमारी के शयनागार के एक कोने में जा छिपी।

अनूप के अपने निकट पहुँचते ही राजकुमारी ने कहा, "जी हाँ, आपको मेरे साथ विवाह करने के लिए राजी होना ही पड़ेगा। आप चाहे जो कुछ कहिए, मैं किसी और के साथ विवाह नहीं करूँगी।" यद्यपि अनूप ने बारंबार यही कहा कि यह कभी नहीं होने का, तथापि उस चुड़ैल ने राजा के पास जाकर सारी बात नमक-मिर्च लगाकर कह डाली। राजा चुप रहा।

राजकुमारी अब बिलकुल चंगी हो गई थी, इसलिए पहले की तरह माली का भोजन लेकर वह उसके कमरे में गई। अनूप ने नित्य के नियम के अनुसार थाली में से कुछ खाना निकालकर कुत्ते को दे दिया। खाते ही कुत्ता ऐंठने लगा और थोड़ी देर में मर भी गया। यह देख राजकुमारी ने थाली उठाई और सीधे जाकर उसे अपने पिता के सामने रख दिया। राजा ने यह सुनकर एक कुत्ता बुलवाया। उस थाली का थोड़ा-सा खाना उसके सामने रखा गया। उसे खाते ही वह कुत्ता भी मर गया। तब राजा ने उस चुड़ैल दासी को पकड़वा मँगाया और उसके सामने वह थाली रखकर भोजन समाप्त करने के लिए कहा। दासी को वह भोजन खाना पड़ा और जब तक खाना खतम हो वह स्वयं भी खतम हो गई।

जब राजकुमारी दूसरी थाली सजाकर अनूप के कमरे में गई, उस समय अनूप कपड़े उतारकर सोने जा रहा था। राजकुमारी ने उसका खुला चमकता हुआ सिर देख लिया। उसे देखते ही वह अपनी सुध-बुध खो बैठी। उसने फिर उसी क्षण उससे विवाह का प्रस्ताव किया। अनूप ने फिर वैसा ही उत्तर दिया।

अब राजकुमारी ने अपने पिता से भी अपने मन की बात कह डाली। राजा ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। पर राजकुमारी ने ज़िद पकड़ ली। तब राजा ने कहा, "तुम्हारी इच्छा है तो तुम उसके साथ विवाह करो, पर याद रखो दहेज़ के नाम पर मैं तुम्हें कुछ न दूंगा, और न तुम उसके साथ महल में ही रह सकोगी। विवाह के बाद नगर के बाहर पहाड़ पर जो पुरानी हवेली है, वही तुम्हारे रहने के लिए मिलेगी। हमारे पास सप्ताह में सिर्फ एक बार तुम अकेली चाहो तो आ सकती हो।"

राजा ने समझा कि इस कड़ाई से राजकुमारी की हठ जाती रहेगी, किन्तु इस शर्त पर भी उसने उस बागवान के साथ विवाह करना मंजूर कर लिया। फिर तो दोनों का विवाह हो गया। अब दोनों नगर के बाहर पहाड़ पर रहने लगे। थोड़े समय बाद उनके पास खाने

के लिए कुछ भी नहीं रहा। राजकुमारी अनूप के सिर के थोड़े-से बाल, जो कंघा करने से टूट गए थे, लेकर बाज़ार में एक सुनार की दूकान पर गई। उसे देखते ही वह हैरान हो गया और उसकी कीमत न लगा सका। तब वह दूसरे सुनार के पास गई। उसने भी उस सोने को बहुमूल्य बताकर उसका पूरा दाम दे सकने में अपनी असमर्थता प्रकट की। तब जो-कुछ वह दे सका उसीसे सन्तोष कर राजकुमारी ने घर-खर्च के लिए बहुत-सा सामान खरीदा और अपनी हवेली में आई। बहुत दिन तक उसे किसी वस्तु की कमी न रही। इस प्रकार साल में दो-तीन बार अनूप के केश लेकर राजकुमारी बाज़ार में जाती और उन्हें बेचकर निश्चिन्त अपना समय व्यतीत करती थी।

कुछ दिन बाद राजा के एक गढ़ीदार ने विद्रोह किया। जब राजा को यह समाचार मिला तो उसने सेना सजाने की तैयारी की। राजकुमारी से युद्ध का समाचार पाकर अनूप ने राजा को यह कहलाया कि वह भी युद्ध में जाना चाहता है। राजा ने यह सुनकर कहा, "जिस आदमी ने जीवन में पेड़-पौधों पर रहने वाले पतिंगों के सिवा कभी और कुछ न मारा हो, वह लड़ाई में जाकर क्या करेगा ?" राजकुमारी ने कहा,

"कुछ भी हो, वह आपका जामाता है। बहुत कहने-सुनने पर राजा ने उसे महल में आने की अनुमति दी।

अनूप ने रण-क्षेत्र में जाने की तैयारी की और राजा से एक घोड़ा और ढाल-तलवार माँगी। राजा ने उसे एक लँगड़ा और अन्धा घोड़ा, तथा ज़ंग लगी हुई एक पुरानी तलवार दे दी। अनूप अपने अनोखे अश्व पर आसीन हो रण-क्षेत्र में शीघ्र पहुँच जाने के लिए उसे एड़ लगाने लगा। परन्तु वह अंधा घोड़ा महल से थोड़ी दूर जाकर एक गड्ढे में फँस गया और कीचड़ में ऐसा अटका कि अनूप लाख उपाय करके भी उसे गड्ढे से बाहर न निकाल सका। जिस समय अनूप ऐसी दुर्दशा में पड़ा हुआ था उसे वही सफेद घोड़ी सामने दिखाई पड़ी। अनूप अपने अंधे घोड़े की पीठ से उतरकर उसके पास आ गया। सफेद घोड़ी की पीठ पर एक तलवार और एक बरछा बँधा था। घोड़ी ने अनूप को वह बरछा तथा तलवार हाथ में लेकर पास ही जो एक श्यामकर्ण घोड़ा खड़ा था उसकी पीठ पर बैठ जाने के लिए कहा। जब अनूप ने श्यामकर्ण घोड़े की पीठ पर बैठ तलवार और बरछा सँभाल लिया, तो घोड़ी ने उससे कहा कि मार्ग में उसे उसके दोनों साढ़ू (उसकी पत्नी की बड़ी बहनों के पति) दिखाई देंगे।

किन्तु उनसे कुछ भी कहे-सुने बिना उसे शत्रु की गढ़ी के फाटक पर पहुँच जाना होगा। बरछे की पहली चोट से ही किले का फाटक चूर-चूर होकर गिर पड़ेगा और तब राजा का शत्रु तुरन्त सुलह के लिए प्रार्थना करने लगेगा।

अनूप की एड़ लगते ही वह घोड़ा द्रुतगति से शत्रु के नगर की ओर लपक पड़ा। मार्ग में अपने साढ़ुओं को देखकर भी उसने उनसे चिन्हारी नहीं की, और सीधे शत्रु के नगर के फाटक पर पहुँचकर अपने बरछे के प्रहार से छण-भर में उसे तोड़-फोड़ डाला। फाटक तोड़कर जब वह महल में घुस पड़ा तो सभी लोग उसके सामने आकर हाथ जोड़ने लगे, गढ़ीदार ने खज़ाने की कुञ्जियाँ और सभी काग़ज़-पत्र उसे समर्पित कर दिए। खज़ाने की कुञ्जियाँ और काग़ज़-पत्र लेकर अनूप लौट पड़ा और मार्ग में अपने साढ़ुओं को देखकर बोला, "युद्ध समाप्त हो गया, अब आप लोग लौट जाइए!" उन्होंने अनूप को न तो पहचाना और न उससे कुछ पूछा, उल्टे पाँव घर लौट पड़े।

नगर के निकट पहुँचकर अनूप उस घोड़े पर से उतर गया। उसने उस तलवार तथा बरछे को घोड़े की

पीठ पर बाँध दिया। घोड़ा चला गया। अनूप जिस समय अपने अन्धे घोड़े को कीचड़ में से निकालने में व्यस्त था, उसी समय उसके साढ़ू और उनके सिपाही लौटते हुए उसके पास से निकले और व्यंग-भरे वचनों में बोले, "छोटे भाई, लौट चलिए। आपको आगे कदम रखना भी न पड़ा और यहीं से खड़े-खड़े आपने लड़ाई सर कर ली।" अनूप ने धीरे से कहा, "जी हाँ!" और इस पर वे लोग खूब हँसते हुए महल को चले गए।

अनूप भी किसी प्रकार अपने अन्धे घोड़े को खींच-खाँचकर गड्ढे के बाहर ले आया और उस पर सवार हो महल में पहुंचा। वहाँ अस्तबल में अपना घोड़ा पहुँचाकर और पुरानी तलवार शस्त्रागार के मुंशी के पास जमा करके चुपचाप अपने निर्जन पहाड़ी आवास में चला गया।

युद्ध के सम्बन्ध में उसकी स्त्री ने पूछा तो कह दिया कि लड़ाई समाप्त हो गई और अपने राजा की विजय हुई है।

: ३ :

धीरे-धीरे समय बीतता जाता था और बुढ़ापे के

कारण राजा की आँखों की ज्योति मंद पड़ रही थी। कुछ ही दिनों में वह बिलकुल अन्धा हो गया। पुराने लोगों के मुँह से राजा ने कभी ऐसा सुना था कि कहीं पर तो ऐसा जल मिलता है जिससे जवानी फिर लौट आती है, और कहीं ऐसा जल भी होता है जिससे अन्धे की आँखों की ज्योति वापस मिल जाती है। सो एक दिन उसने अपने दोनों बड़े दामादों को बुलाकर उनसे कहा कि वे उस जल की खोज कर उसके लिए ले आएँ, क्योंकि अन्धा रहकर इस प्रकार जीवित रहने में उसे बहुत दुख था।

निदान चक्षु-ज्योति-दायक जल प्राप्त करने के लिए वे दोनों रवाना हुए। जब वे जा रहे थे उस समय उनकी पत्नियों ने उन्हें एक-एक स्वर्णाभ सेब स्मृति-दान के रूप में दिया। कितने ही दिन तक वे अनेक नगर, जंगल और पहाड़ों की खाक छानते रहे, किन्तु उन्हें वह जल कहीं न मिला। अन्त में हताश हो एक सुन्दर नगर में वे बस गए, और अपना नया विवाह करके नई पत्नी के साथ आनन्दपूर्वक समय काटने लगे।

जब कई वर्ष बीत गए और राजा को दोनों दामादों की कोई खबर न मिली, तो अनूप ने राजा का अन्धापन दूर करने के लिए उस पानी की खोज में

निकलने की अपनी इच्छा अपनी पत्नी अनूपा से प्रकट की। राजकुमारी ने अपने पति के संकल्प का स्वागत किया। तदनुसार अनूपकुमार एक दिन घर से निकल पड़ा। उसने अपनी पत्नी को समझा दिया कि राजा को उसके जाने की कोई ख़बर न दी जाय।

कई महीने चलते-चलते एक नगर से दूसरे नगर होते हुए अनूप बड़े दूर देश में जा पहुँचा। वहाँ जिस किसी से वह ऐसे जल के सम्बन्ध में पूछता वही उसका मज़ाक उड़ाता। कोई कहता कि विष्णु की नाभि पर बैठकर देखो तो उस जल का कुआँ दर्पण की तरह चमचमाता हुआ दृष्टिगोचर होने लगेगा। .कोई कहता कि अलादीन के चिराग में लैला के बालों में मला जाने वाला तेल जलाकर ढूंढ़ो तो उस कुएँ का का फ़र्श नज़र आने लगेगा। निदान एक दिन बहुत उदास जब वह एक बियाबान में से गुज़र रहा था, रास्ते में सफेद केशों वाली एक बुढ़िया उसे बैठी मिली।

जब अनूप बुढ़िया के पास से गुज़रा तो उसने कहा, "कहो पुत्र अनूप, इधर कहाँ जा रहे हो?"

पुत्र का संबोधन होते ही उसे अपनी बुढ़िया माता की सुध आ गई और उसकी आँखें डबडबा उठीं। तब बुढ़िया ने कहा, "बेटा, तुमने मुझे पहचाना नहीं।

मैं वही श्वेत अश्विनी हूँ जिसका तुमने उद्धार किया था और जिसने तुम्हारे ससुर के शत्रुओं को पराजित करने में तुम्हें मदद पहुँचाई थी।"

यह सुनते ही अनूप झट बुढ़िया के चरणों पर गिर पड़ा और सारा वृत्तान्त कह डाला। बुढ़िया ने कहा कि उसे सब ज्ञात है और उसने बताया कि थोड़ी दूर उसी मार्ग पर जाने के बाद उसे दो जीव परस्पर लड़ते हुए दिखाई पड़ेंगे। वह वहाँ रुककर सब-कुछ ध्यान से देखे। उसे वहीं एक बूटी मिल जायगी, जिसकी पत्तियाँ पानी में उबाल ली जायँ तो उस जल के स्पर्श से मृत प्राणी संजीवनी शक्ति और अंधे नेत्रों की ज्योति प्राप्त कर लेते हैं। इतना कहकर बुढ़िया उठ खड़ी हुई और पहाड़ की जड़ में एक कुटिया की तरफ इशारा करके वहीं उस बूटी की पत्तियाँ लेकर आने के लिए अनूप को आदेश दे चली गई।

अनूप बुढ़िया को प्रणाम करके अपने मार्ग पर चलने लगा। कई घण्टे तक चलते रहने के पश्चात् मार्ग में उसे दो गुहेरो आपस में लड़ते हुए दिखाई पड़े। अनूप एक पेड़ की छाया में बैठकर उनका भयंकर युद्ध देखने लगा। वे गुहेरो घड़ियाल के बच्चे के बराबर लम्बे और खूँखार थे। कई घण्टे तक उनका

तूफानी युद्ध चलता रहा। अन्त में एक की गरदन दूसरे ने इतनी देर तक मुँह में भरकर चबा डाली कि उसके प्राण जाते रहे। उसे मरा देख मारने वाला गुहेरो एक बूटी की पत्ती दाँतों में दबाकर ले आया और ज्योंही अपने दाँतों से कुचली हुई पत्ती उसने मरे हुए गुहेरो के ऊपर धर दी, वह फिर पहले ही की तरह रेंगने लगा और वे दोनों दो अलग-अलग दिशाओं में चले गए।

उनके हटते ही अनूप ने ज़मीन पर पड़ी हुई पत्तियाँ चुनीं और आस-पास घूमकर उस बूटी की पहचान कर ली। फिर तो काफी पत्तियाँ लेकर एकदम शाम हो जाने पर वह बुढ़िया की कुटिया में पहुँचा।

तत्काल उन पत्तियों को पानी में उबालकर बुढ़िया ने दो बोतलों में भर दिया। फिर दूसरे दिन जब अनूप चलने लगा तो बुढ़िया ने कहा, "बेटा, कीमत लेकर यह जल कभी किसी को न बेचना। इस पहाड़ी के उस पार जो बड़ा शहर है उसमें तुम्हारे दोनों साढ़ू दूसरी शादी करके विलास में पड़े हैं। उन दोनों के पास एक-एक सोने का सेब है। तुम थोड़ा-सा अपना यह जल उन्हें देकर बदले में उनसे सुनहरा सेब ले लेना। परमात्मा तुम्हारे सकल मनोरथ पूर्ण करेंगे।"

: ४ :

उस शहर में पहुँचकर अनूप सराय में ठहरा । नगर की गलियों में फेरी लगाता हुआ वह पुकार-पुकारकर कहता, "किसको चाहिए ? अन्धे को बीनाई देने वाला जल ? बुड्ढे को जवानी देने वाला जल ? किसको चाहिये ?" पर उसकी बात सुनकर प्रायः लोग हँस देते । एक दिन वह उस गली में पहुँच गया जहाँ उसके साढ़ू रहते थे । फेरी वाले की आवाज़ सुनते ही उन्हें अपने कर्तव्य का ध्यान हो आया । बाहर निकलकर उस जल की परीक्षा करने के लिए वे उससे प्रार्थना करने लगे। फेरी वाले के राजी हो जाने पर वे कहीं से एक अन्धा कुत्ता पकड़कर ले आए । अनूप ने उस बोतल में से एक-एक बूँद जल ज्योंही कुत्ते की आँखों में डाला तो उसकी आँखें खुल गईं । आँखें खुलते ही कुत्ता दौड़ता हुआ चला गया । यह देख वे बहुत खुश हुए और फेरी वाले से उस बोतल की कीमत पूछने लगे । अनूप ने कहा कि यह जल बेचा नहीं जाता, पर जो कोई बदले में सोने के सेब दे सके उसी को यह जल मिल सकता है । उन दोनों के पास सोने के सेब थे ही, सो उन्होंने खुशी-खुशी सेब देकर थोड़ा जल ले लिया, और रात में ही अपनी-अपनी उप-पत्नियों को तजकर चोरी

की तरह चुपचाप वहाँ से प्रस्थान कर दिया।

उस जल के प्रयोग से राजा एक बार फिर से जवान और स्वस्थ हो गया, उसकी आँखों की ज्योति भी लौट आई। अपने दामादों के सफल होकर लौट आने के कारण राजा ने नगर-भर में कई दिन तक लगातार उत्सव मनाने का हुक्म दिया। चारों ओर नृत्य-गान और भोज-भात हो रहे थे और शहनाइयाँ बज रही थीं।

जिस समय ये सब आनन्द-बधाए बज रहे थे, अनूप भी लौटकर अपने घर आया, किन्तु अपनी पत्नी से बिना एक भी शब्द कहे-सुने चुपचाप एक कोने में पड़ रहा। राजा के महल के उत्सव में सम्मिलित होने का बुलावा राजकुमारी के लिए तो आया था, किन्तु उसके पति के लिए नहीं। अनूप का जाना और आना राजा को मालूम नहीं था, इस कारण अपने पिता की अपने पति के प्रति इस प्रकार की उपेक्षा राजकुमारी को असह्य हो गई। वह अकेली अपने पिता के यहाँ जाने को तैयार न थी, किन्तु अनूप के बारंबार ज़ोर देने पर उसे जाना ही पड़ा।

महल में जाकर राजकुमारी ने अपने पिता से प्रार्थना की कि ऐसे आनन्द-महोत्सव में उसके पति

को भी बुलाया जाना चाहिए। किन्तु राजा ने यह कह-कर टाल दिया कि उसका यहाँ क्या काम ? राज-कुमारी ने कहा, "और कोई काम नहीं तो जलाने के लिए लकड़ी ही फाड़ेगा।" राजा ने कहा कि इस काम के लिए योंही उसके पास लोगों की कमी नहीं। राजा का एक मित्र, फौज का बूढ़ा सेनापति उस समय वहीं मौजूद था। जब राजकुमारी अपने पिता के ऐसे कठोर शब्द सुनकर वहाँ से हट रही थी, उस समय बूढ़े ने राजा से कहा, "आख़िर वह भी आपका दामाद है। इस उत्सव में उसे भी निमन्त्रित करना चाहिए।"

राजा ने एक वक्त भोजन करने के लिए उसे दावत देना मंजूर किया।

राजकुमारी अपने पति को साथ लिवा लाने के लिए अपने घर आई और फिर सन्ध्या-समय दोनों महल में गये। खाना खाकर कुछ लोग किस्से-कहानियाँ कहने लगे। वहीं किसी ने अनूप से पूछ लिया कि उसे क्या एक भी कहानी नहीं आती ? अनूप ने कहा कि कहानी तो वह भी जानता है और सुना भी सकता है, किन्तु एक-दो को छोड़कर उसकी कहानी सुनेगा कौन ? और वह पसन्द ही किसे आयेगी ? उसकी इतनी बात राजा के कानों में पड़ गई। तत्काल मेज़ पर अपनी तलवार

रख कर उसने कहा, "ख़बरदार ! इस कहानी के बीच अगर किसी ने ज़बान खोली तो इस तलवार की नोक उसके कलेजे के गरम रक्त को स्पर्श किये बिना न रहेगी।"

: ५ :

अनूप ने अपनी कहानी आरम्भ की। उसने कहा, "किसी समय एक राजा के तीन दामाद थे—दो लायक और एक नालायक। एक बार राजा के शत्रु से लड़ाई छिड़ी और उसके लायक दामादों ने फौज लेकर शत्रु पर चढ़ाई की। नालायक दामाद ने भी लड़ाई पर जाना चाहा तो चढ़ने को अन्धा घोड़ा और लड़ने को एक टूटी तलवार उसे दी गई। फिर भी युद्ध में दुश्मनों की गढ़ी का फाटक अकेले उस नालायक ने ही तोड़ा और शत्रुओं को पराजित कर उनके खजाने की कुञ्जियाँ और उनके लिखे प्रतिज्ञापत्रों को भी उसी ने हासिल किया। पर अफ़सोस कि वापस आने पर विजय की दावतों के लिए निमन्त्रण तक उसे नहीं दिया गया।"

इतना कहकर कुञ्जियों का गुच्छा और सब काग़ज़-पत्र अनूप ने राजा के सामने रख दिए। राजा ने

कागज़ों और कुञ्जियों की प्रामाणिकता की परख कराई तो वे सत्य सिद्ध हुए। फिर अनूप ने अलौकिक जल को प्राप्त करने और उसे सोने के सेबों के बदले अपने साढुओं को देने का सारा दास्तान विस्तार से कह सुनाया। सुनहरे सेबों का प्रसंग आते ही अनूप की पत्नी छोटी राजकुमारी अनूपा एकदम चिल्ला उठी, "क्या वे सेब तुम्हारे पास हैं ? कहाँ रखे हैं तुमने वे ?"

कहानी के बीच उसी ने ज़बान खोली थी, इसलिए इतना कहकर उसके बैठने से पहले ही मेज़ पर धरी तलवार उठाकर अनूप ने उसका सिर काट लिया। यह अनर्थ देख चारों ओर हाहाकार मच गया। अनूप ने हाथ में तलवार लिये ही गरजकर कहा, "राजकुमारी को वाचालता के लिए दण्ड देकर मैंने महाराज के ही आदेश का सम्मान किया है। किसी को इस सम्बन्ध में विवाद नहीं करना चाहिए। राजकुमारी के प्राणों का आवर्तन मैंने किया है। मैं उसका पति हूँ, प्रवर्तन भी मैं ही करूँगा।"

अनूप ने मरे प्राणियों को जिलाने वाले जल की शीशी अपनी जेब से निकाल अपनी पत्नी के मृत शरीर पर ज्योंहो उसकी कुछ बूँदें छिड़कीं और थोड़ा-सा जल

उसके मस्तक पर छिड़का, राजकुमारी पहले से भी अधिक स्वस्थ और युवती होकर उठ बैठी। तब तो सब लोगों ने एक स्वर से अनूप की जय-जयकार की।

राजा ने गद्गद होकर कहा, "वत्स, मेरा सिंहासन और राजमुकुट अब तेरा हो चुका है, और तेरे सिर का चर्म-रोग दूर होते ही तेरा राज्याभिषेक किया जायगा।" अनूप के सिर पर सदा कसकर एक रूमाल बँधा देखकर ही राजा को इस तरह का सन्देह हुआ था। राजा की यह बात सुन राजकुमारी ने अपने पति के सिर पर बँधा रूमाल तुरन्त खींच लिया और बोली, "पिताजी, मेरे पति के सिर का रोग ज़रा ध्यान से देखिये!"

स्वर्ण से भी अधिक दमकता हुआ अनूप का सिर देखकर राजा आनन्द से विह्वल हो गया। अपना स्थान छोड़कर वह तुरन्त उठ खड़ा हुआ और अपना ताज स्वयं लाकर अनूप के मस्तक पर रख दिया। फिर उसने कहा, "आज से यह ताज एक अधिक योग्य सिर के ऊपर शोभित रहेगा।"

उस दिन से छोटी राजकुमारी और अनूप महल में ही रहने लगे। राजा के दोनों बड़े दामादों ने जिस प्रकार अपने सुनहरे सेबों का अनूप के जल के साथ

बदला किया था, उसी प्रकार अब उनके महलों का भी बदला हो गया। अब राजकुमारी अनूपा को अपने पति के सुनहरे बाल बेचने के लिए बाज़ार जाने की आवश्यकता न रही।

अनूप ने अपनी वृद्ध माता को भी शीघ्र ही अपने पास बुला लिया।

नाग-नगर की राजकुमारी

: १ :

बड़े पुरातन युग की यह एक ऐसे गरीब देहाती की कथा है जो अपने गाँव में सबसे बेकार और भाग्यहीन आदमी समझा जाता था और लोग जिसे अभागा भोलाराम के नाम से पुकारते थे। भोलाराम सचमुच भोलाराम ही था। जैसा नाम वैसा ही उसका गुण था। वह जहाँ कहीं जाय, जो कुछ करे, जिस किसी के यहाँ नौकर हो, उसकी परिस्थिति में कभी कुछ अन्तर नहीं पड़ने का। बेचारे का जीवन फटे दूध के समान था, जिसकी बाज़ार में कभी कोई कीमत नहीं लगती।

घर वालों की बेरुखी, पास-पड़ोस वालों की मसखरी और रोज़-रोज़ की भुखमरी से अपने गाँव से उसका दिल फट गया और अन्त में गाँव छोड़कर बाहर नौकरी करने की इच्छा से वह घर से निकल पड़ा।

कई दिन की यात्रा के बाद वह एक दूसरे राज्य में पहुँच गया और वहाँ एक धनी किसान के यहाँ एक साल के लिए नौकर हुआ। तनख्वाह के सम्बन्ध में यह

तय हुआ कि गेहूँ बोया हुआ एक खेत उसे दे दिया जायगा, जिसकी उपज उसकी अपनी होगी और दो जून रोज़ का खाना उसे ऊपर से मिलता रहेगा।

भोलाराम अपने मालिक के यहाँ प्रेमपूर्वक काम करने लगा। उसको जो खेत मिला उसमें मालिक के खेतों से अच्छा गेहूँ उगा। जो कोई उधर से निकलता, पूछता कि वह खेत किसका है? यह सुनकर भोलाराम के कलेजे को बहुत ठंडक पहुँचती थी। कुछ दिनों में मालिक के खेतों में जब गेहूँ में डंठल उगे तो भोलाराम के खेत में गेहूँ में बालियाँ निकल आईं। मालिक के खेत में बालियाँ निकलीं तो भोलाराम के खेत में बालियों में गेहूँ पक गया। भोलाराम ने मन-ही-मन कहा—कल लौनी करेंगे। मगर उसी रात घनघोर बादल घिर आए और इतने ओले गिरे कि भोलाराम के खेत में एक भी डंठल खड़ा न रहा। बेचारा फूट-फूटकर रोने लगा। अब वह एक दूसरे आदमी के यहाँ नौकरी के लिए गया।

दूसरे मालिक के यहाँ भी उसे एक साल के लिए नौकरी मिली। इस मालिक के पास कई घोड़े और गायें थीं। उसके पास एक बछेड़ी भी थी। भोलाराम ने तनख्वाह के रूप में वह बछेड़ी माँगी। मालिक ने खाना-कपड़ा के अलावा साल-भर की तनख्वाह के रूप में

उसे वह बछेड़ी देना मंजूर कर लिया। भोलाराम यहाँ भी छाती फाड़कर काम करने लगा। वह अपनी बछेड़ी की खूब देखभाल करता था। कुछ ही दिनों में वह बछेड़ी घोड़ा-गाड़ी में जोतने लायक हो गई। भोलाराम सोचता कि उस घोड़ी को बेचने से उसे शीघ्र ही एक अच्छी रकम मिल जायगी। जिस दिन उसने बाज़ार में बेचने के लिए घोड़ी ले जाने का निश्चय किया, उस दिन के आने से पहले ही रात में भेंड़ियों ने अस्त-बल पर धावा बोल दिया और उसकी घोड़ी को चीर-फाड़कर शेष कर दिया। बेचारी की कुछ अस्थियाँ ही बाकी बचीं।

भोलाराम को रोता-बिलखता देखकर लोगों ने बहुत समझाया। कुछ लोगों ने कहा कि राजा के पास जाकर नौकरी माँगनी चाहिए, क्योंकि राजा सारी प्रजा के लिए पिता के समान है। वह ज़रूर उसे आश्रय देगा। निदान भोलाराम राजा के दरबार में गया। राजा ने उसे अपने दरबार में रख लिया। परन्तु थोड़े ही दिन में वहाँ भी भोलाराम की कलई खुल गई। राजा को मालूम हुआ कि भोलाराम जिस काम में हाथ डालता उसे चौपट कर देता है। तब एक दिन राजा ने उसे बुलवाकर कहा, "भोलेराम, मैं नहीं जानता था कि

तुम इतने बड़े मंदभागी हो। अब कल तुम्हारे सामने तीन कनस्तर रखे जायँगे। उनमें से एक में सोना, एक में लोहा और एक में बालू भरी होगी। तुमको उनमें से कोई एक कनस्तर लेना होगा। अगर तुमने सोने वाला कनस्तर चुना तो मैं तुम्हें जागीर देकर अपना एक सभासद बना लूँगा। अगर तुमने लोहा-भरा कनस्तर लिया तो तुम्हें लोहार की दूकान करके यहाँ रहना होगा। परन्तु यदि तुमने बालू वाला कनस्तर उठाया तो तुरन्त हमारे राज्य की सीमा से बाहर निकल जाना पड़ेगा।"

दूसरे दिन दरबार में भोलाराम के सामने तीन कनस्तर रखे गए। उसने बारी-बारी से तीनों कनस्तरों पर उंगली रखकर उन्हें बाहर से टटोला। अन्त में एक कनस्तर को सोना-भरा समझकर उसने उठा लिया। तब वह कनस्तर सबके सामने तोड़ा गया। दुर्भाग्य अभागे का! उसमें से बालू झर-झर गिरने लगी।

यह देख राजा ने कहा, "भोलेराम, तुम सचमुच बड़े अभागे हो। अब तुम अपना रास्ता नापो।"

बेचारे भोलाराम को उस राज्य की सीमा से बाहर जाना पड़ा। चलते समय राजा ने उसे एक घोड़ा और एक तलवार दिलवा दी।

: २ :

घोड़े की पीठ पर बैठकर भोलाराम दिन-भर चलता गया। रास्ते में उसे कहीं कुछ खाने को नहीं मिला। बिना कुछ खाये-पिये एक पेड़ के नीचे रात बिताकर वह फिर सबेरे रवाना हुआ। दोपहर तक चलने के बाद उसे दूर पर घास की एक टाल दिखाई पड़ी। यह सोचकर कि वहाँ पहुँचते ही घोड़े के लिए कुछ घास तो मिलेगी ही, वह उस टाल की तरफ चला। पर निकट पहुँचने पर उसने देखा कि टाल में आग लगी हुई है। यह देख भोलाराम की आँखों में आँसू भर आए।

उसी समय उसके कानों में कहीं से आवाज़ आई, "मुझे बचाओ, जल्दी करो, मुझे बचाओ, मैं जली जा रही हूँ।"

"किसे बचाऊँ? कैसे बचाऊँ? मेरी समझ में कुछ भी तो आता नहीं।" भोलाराम ने कहा।

"अपनी तलवार आगे बढ़ा दो, मैं उसी के सहारे निकल आऊँगी।" जवाब मिला।

भोलाराम ने टाल के पास अपनी तलवार बढ़ा दी। क्षण-भर में उस तलवार से लिपटकर एक साँप बाहर आया और उसने भोलाराम से कहा, "तुमने मुझे जलकर मरने से बचा लिया। अब अपने घोड़े पर रखकर मेरे

नगर तक मुझे पहुँचा दो। मैं घोड़े की गरदन से लिपट-कर उसका सिर जिस तरफ फेरती चलूँ, उसी तरफ चलते रहो तो शीघ्र ही मेरे महल में पहुँच जाओगे।"

इस प्रकार कई घण्टे चलने के बाद भोलाराम एक बड़े आलीशान महल के पास पहुँचा। वहाँ साँप घोड़े की गरदन से उतरा और भोलाराम को वहीं रुका रहने का आदेश दे रेंगता हुआ महल में चला गया। भोला-राम भूख और थकान से चूर हो घोड़े की पीठ पर बैठा-ही-बैठा ऊँघने लगा। कई घण्टे बीत गए पर महल का फाटक न खुला। तब वह बहुत दुखी होकर अपने भाग्य को कोसता हुआ गरदन नीची करके बिसू-रने लगा। उसी समय राजसी वस्त्र और आभूषण पहने हुए एक अत्यन्त सुन्दरी बाला फाटक के सामने आ खड़ी हुई। उसे देखते ही भोलाराम बड़े अचरज और असमंजस में पड़ गया। फाटक खोलकर उस रमणी ने भोलाराम को भीतर आने का संकेत किया। भीतर ले जाकर उस रमणी ने आँगन में कुछ घास डालकर घोड़े को वहीं बाँधा और भोलाराम को भोजनालय में लिवा गई।

भोजन-गृह में एक चौकी पर छोटी-सी थाली में सिर्फ एक रोटी पड़ी थी। यह देख भोलाराम बहुत

उदास हुआ। उसे लगा कि ऊँट के मुँह में जीरा ! किन्तु रोटी का एक टुकड़ा मुँह में रखकर उसने जब एक घूंट पानी पिया तो उसकी सारी भूख-प्यास जाती रही। उस देवी ने थोड़ा और खाने के लिए पूछा, किन्तु भोलाराम को भूख कहाँ थी ? उसने खिड़की से झाँक-कर जब अपने घोड़े की तरफ आँख उठाई तो देखा कि घोड़े के सामने घास और भूसे का ढेर लगा हुआ था। रमणी में एक विचित्र शक्ति देखकर उसे बहुत आश्चर्य हुआ, किन्तु वह थककर ऐसा चूर था कि बिस्तरे पर लेटते ही नींद आ गई। वह रात-भर खुर्राटे लेता रहा।

सबेरा होने पर वह रमणी फिर उसके पास आई और बोली कि भोलाराम ने उसके प्राणों की रक्षा की है, इसलिए वह भी उसके साथ कुछ नेकी करना चाहती है। भोलाराम नाग-कुमारी की अलौकिक शक्ति और विनम्रता से इतना प्रभावित हुआ था कि वह स्थान छोड़कर वह अन्यत्र जाना नहीं चाहता था। किन्तु नाग-कुमारी ने उसे बताया कि एक दूर देश में मान-प्रतिष्ठा तथा राजसिंहासन उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। अतः जितनी जल्दी हो सके उसे वहाँ पहुँच जाना चाहिए।

यह सब कहकर राजकुमारी ने भोलाराम को एक

तलवार, चढ़ने के लिए एक सुन्दर घोड़ा, पहनने के लिए एक अंगा तथा एक हस्तत्राण (दस्ताना) दिया। फिर उसने बताया, "कोई सौ मील उत्तर में एक राजा के राज्य पर एक दूसरे राजा ने चढ़ाई करके राजकुमारी का हरण किया है। तुम अब उस देश में जाकर राजा के शत्रु को पराजित करो और राजकुमारी को उसके पिता के महल में पहुँचा दो। जब तक यह अंगा तुम पहने रहोगे तब तक संसार का बली-से-बली मनुष्य भी तुम्हें पकड़ न सकेगा, और इस तलवार के घुमाते ही तुम्हारे सामने हज़ार आदमी भी हों तो सब धराशायी हो जायँगे। सो तुम शीघ्र उस देश में पहुँचकर मान-मर्यादा और सुख-समृद्धि प्राप्त करो। पर इतना याद रखना कि सात वर्ष से पहले अपना भेद किसी को लाख पूछने पर भी न बतलाना।"

भोलाराम दूसरे दिन नाग-कुमारी से विदा होकर उत्तर दिशा में चल पड़ा। चार-पाँच दिन की यात्रा करके वह एक नगर में पहुँचा और आराम करने के लिए सराय में ठहरने गया। सराय वाले के पता-ठिकाना पूछने पर उसने अपने को अनजान देश का राही बताया। सराय वाला बोला, "अनजान देश ने ही तो हमारे देश पर चढ़ाई करके हमारे राजा की

इकलौती कन्या का अपहरण किया है।"

"मैं उस कन्या को शत्रु के किले से मुक्त कर लाऊँगा। तुम मुझे अपने राजा के सामने ले चलो।" भोलाराम ने कहा।

फिर तो वे लोग उसे दूसरे दिन प्रातःकाल राजा के सामने ले गए। राजा के पूछने पर भोलाराम ने कहा, "पृथ्वीनाथ, मैं उस अनजान देश के राजा को परास्त करके आपके पास पकड़ लाऊँगा। बस मुझे उसका पता-ठिकाना बता दीजिए, और अपने राज्य के दो सबसे अधिक वफ़ादार और बहादुर सिपाहियों को मेरे साथ कर दीजिए।" भोलाराम की बात सुनकर राजा को बहुत आश्चर्य हुआ। पर उसने तत्काल नगर-भर में मुनादी पिटवाई और जितने वीर सिपाही अपनी सेवा अर्पित करने आये उनमें से दो को चुनकर भोलाराम के संग कर दिया। उन दोनों सिपाहियों को साथ लेकर भोलाराम वीरान अनजान देश की तरफ रवाना हुआ।

कितने ही दिन की मंज़िल तय कर वे शत्रु के राज्य की सीमा में पहुँच गए। भोलाराम ने उन वीरों से आराम करने के लिए कहा। उसकी आज्ञा पाकर वे दोनों तो सो रहे और भोलाराम पहरा देता रहा।

सबेरा होने पर उधर से शत्रुओं की एक भारी सेना निकली। भोलाराम और उसके साथियों का पहनावा देखकर लोगों ने इन्हें पहचाना और इनके ऊपर तीर छोड़ना शुरू कर दिया। किन्तु भोलाराम के शरीर पर लग-लगकर तीर ज़मीन पर गिर जाते थे। यह दृश्य देखकर शत्रु-पक्ष के सिपाही बहुत हैरान हुए। तब तक भोलाराम अपनी तलवार घुमाने लगा। जितने भी सिपाही उसके आसपास आये सब घास-मूली की तरह कट-कटकर ज़मीन पर गिरने लगे। यह अचम्भा देख शत्रु-राजा की वह बड़ी सेना भाग खड़ी हुई। भोलाराम ने दूर तक उनका पीछा किया और सारी सेना को रौंद डाला।

अब अपने दोनों साथियों को लेकर भोलाराम शत्रु-राजा के महल में पहुँचा। उसकी वीरता की गाथा वहाँ पहले ही पहुँच चुकी थी। डर के मारे उन लोगों ने राजकुमारी को वापस करना मंजूर कर लिया और बहुत सा धन हरजाने के रूप में देकर सन्धि कर ली। इस प्रकार सोने की पालकी में वस्त्र और आभूषणों से अलंकृत राजकुमारी को बिठाकर भोलाराम सम्मान-सहित उसके पिता के यहाँ ले आया।

भोलाराम के पराक्रम से राजा बहुत प्रसन्न हुआ

और अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार उसके साथ राजकुमारी का विवाह कर दिया। अब भोलाराम बड़े सम्मान और सुख के साथ महल में रहने लगा। शत्रु राजा के जो सभासद राजकुमारी को पहुँचाने साथ आये थे, खुशामद के बल पर नौकरी प्राप्त करके यहीं रह गए थे। कुछ दिन में ही वे लोग राजकुमारी की खुशामद करके उसके विश्वासपात्र बन गए। उसी समय बूढ़े राजा का देहावसान हो गया और भोलाराम को प्रजा ने उसके सिंहासन पर बिठाया।

शत्रु राजा के दरबारी धीरे-धीरे भोलाराम के विरुद्ध रानी के कान भरने लगे। फिर तो रानी उन मक्कारों के बहकावे में पड़कर राजा भोलाराम से पूछती कि वह किस देश से आया है? उसके कुल-परिवार वाले क्या काम करते हैं? उसने युद्ध-विद्या कहाँ से सीखी है? पर भोलाराम इन प्रश्नों का उत्तर देने में शरमाकर रह जाते थे।

एक दिन उन कुटोचरों ने रानी से कहा कि वह किसी उपाय से राजा (भोलाराम) की शक्ति का रहस्य जान ले तो उसे मारकर वे रानी को उसके पुराने राजा (जो उसे हर ले गया था) के पास पहुँचा दें। रानी भोलाराम के सीधेपन से बहुत खुश नहीं थी, इस-

लिए वह उन कुटीचरों के बहकावे में आ गई। रात्रि के समय उसने अपने पति से पूछा, "तुम्हारी ऐसी वह कौनसी वस्तु है जिससे तुम्हें यह अलौकिक शक्ति प्राप्त होती है ?" भोलाराम ने पहले तो ऐसा मुँह बनाया जैसे कि उसने कुछ समझा ही न हो। किन्तु रानी ने जब दुबारा वही प्रश्न किया तो वह बोला, "रानी, मेरी सारी शक्ति मेरे जूतों में ही है। इसलिए जब तक ये मेरे पास हैं संसार का कोई भी वीर मुझे पराजित नहीं कर सकता।"

रानी ने अपने पति के सो जाने पर उसके जूते वहाँ से हटा दिए और हूबहू वैसा ही एक दूसरा जोड़ा वहाँ रख दिया। फिर सवेरे ही उसने कुटीचरों के सरदार से सारी बात कह सुनाई। दोपहर के समय राजा भोलाराम जब शिकार खेलने गये तो उन कुटीचरों ने मुँह पर नकाब डालकर उन्हें घेर लिया और लगे उनके ऊपर बाणों की वर्षा करने। किन्तु उनके तरकश के सारे बाण चुक जाने पर भी जब भोलाराम का कुछ भी न बिगड़ा तो वे हिम्मत हारकर भाग खड़े हुए। बेचारे भोलेराम को क्या पता कि उनके विरुद्ध कैसा भीषण षड्यंत्र रचा गया था।

अपना वार खाली देख वे कुटीचर बहुत झुँझलाए।

उन्होंने रानी से कहा कि उसके पति ने धोखा दिया, और असल भेद नहीं बतलाया है। रानी को यह जानकर बहुत क्रोध हुआ कि उसने अपने मन का भेद उससे छिपा रखा है। परन्तु अपना क्रोध उसने दबा रखा और रात में ऊपरी प्यार और दुलार दिखाती हुई फिर राजा से वही बात पूछने लगी। भोलाराम ने नागकुमारी का आदेश भूलकर एक दिन अपनी रानी को बता दिया कि उसकी सारी शक्ति कहाँ बसती है।

रानी ने रात में ही चुपके से उठकर अपने पति की तलवार छिपा दी और उसकी जगह ठीक उसी तरह की दूसरी तलवार रख दी। दूसरे दिन सवेरे ही रानी ने यह बात भी कुटीचरों के सरदार को बताई। यह जानकर उन कुटीचरों ने दिन में फिर भोलाराम को जंगल में शिकार करते समय घेर लिया। इस बार भी भोलाराम पर उनके बाणों का कोई प्रभाव नहीं हुआ, किन्तु उनकी तलवार छिन गई। अपनी तलवार के छिन जाने से उन्हें वड़ा रंज हुआ। नाग-कुमारी के दर्शनों के बाद उनके जीवन में यह पहला ही दिन था जब उन्हें रंज और निराशा झेलनी पड़ी थी। किन्तु उन्हें शिकार से जीवित लौटा देख उनकी रानी को बहुत अधिक रोष हुआ। उसने समझ लिया कि राजा उसको

तनिक भी नहीं चाहता है, और अपने दिल का भेद उसे कभी नहीं बताता है।

रानी को उदास देख सरल हृदय भोलाराम ने यह समझा कि उनकी रानी उनकी असफलता के कारण दुखी है। इससे बेचारे जंगल की सारी घटना विस्तार से रानी को स्वयं बताकर बोले, "प्रिये, कुछ चिन्ता मत करो! जब तक मेरा यह अंगा मेरी छाती को ढके रहेगा, तब तक स्वयं इन्द्र का वज्र भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।"

रानी ने यह सुनते ही अपना छल का जाल बुन डाला और अपने पति से लिपटकर बोली, "स्वामिन्, गरम जल तैयार है। आप स्नान करके अपनी थकान दूर करें। मेरे पिताजी भी जवानी के दिनों में जब शिकार से लौटते थे, गरम जल से ज़रूर स्नान करते थे।"

बेचारे भोलाराम को कुछ भी सन्देह न हुआ। अपना अंगा अलग रखकर वह स्नान-गृह में गये। उधर रानी ने ठीक वैसा ही एक दूसरा अंगा वहाँ रख दिया, और भोलाराम वाले अंगे को उठाकर छिपा दिया।

स्नान-गृह से निकलकर भोलाराम कपड़े पहन ही रहे थे, तब तक उन कुटीचरों ने उनके ऊपर क्रूर

आक्रमण कर दिया। कुछ ही क्षणों में उनका काम तमाम हो गया। फिर उन दुष्टों ने बेचारे के मृत शरीर को काट-काटकर एक बोरे में भरा, और उस बोरे की गठरी उसके घोड़े की पीठ से बाँधकर घोड़े को नगर से बाहर खदेड़ दिया।

दूसरे ही दिन रानी ने कुटीचरों के सरदार के साथ ब्याह कर लिया, और वह रानी को लेकर साथ-साथ सिंहासन पर बैठने लगा।

: ३ :

नाग-कुमारी का घोड़ा, जो भोलाराम को लेकर उस नगर में आया था, अब नाग-नगर की ओर चल पड़ा। कई दिन की यात्रा करके आधी रात के समय जब वह अपनी राजकुमारी के महल में अश्वस्थल (अस्तबल) में जाकर खड़ा हुआ और हिनहिनाया तो राजकुमारी की नींद टूट गई। अपने घोड़े की हिन-हिनाहट पहचानकर वह तुरन्त समझ गई कि भोला-राम अवश्य किसी भारी विपत्ति में पड़ गया।

नाग-कुमारी के महल से उतरते ही सहस्रों नागों के मणियों के दीपक जगमगाने लगे। अश्वस्थल में जाकर नाग-राजकुमारी ने बोरे की गठरी घोड़े की पीठ

पर से उतारकर ज़मीन पर रखी। फिर उसे खोलकर देखते ही वह गम्भीर चिन्ता में पड़ गई। भोलाराम ने उसके साथ जो नेकी की थी, उसे याद कर और उसकी ऐसी दुर्गति देखकर उसकी आँखों से आँसू गिर पड़े।

फिर उसने बोरे में से भोलाराम के अंगों को बाहर निकालकर धोया और उन्हें ठीक स्थान पर रखकर समूचा ढाँचा जोड़ बिठाया। फिर घाव भरने वाला जल सर्पों से रक्षित सोते से लाकर उन पर छिड़क दिया, जिससे वह समूचा शरीर जुड़ गया और उसकी सारी विकृति जाती रही। फिर प्राणदायक जल छिड़ककर उसने उसे सजीव कर दिया।

भोलाराम ने जब आँखें खोलीं तो अपने को पहले से अधिक स्वस्थ और सचेष्ट पाकर तथा नाग-कुमारी को सामने खड़ी देख उसकी आँखों से आँसू झरने लगे। नाग-कुमारी ने हँसकर उससे कहा, "भोलाराम, एक बार तुमने मेरी प्राण-रक्षा की थी। आज तुम्हें जिलाकर मैंने अपना कर्ज़ चुका दिया। मुझे इस बात का रंज है कि तुम मेरी बात भूल गए। क्या मैंने तुमसे यह नहीं कहा था कि तुम सात साल तक अपना भेद अपनी पत्नी तक को न बताना ?"

भोलाराम के मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला।

नाग-कुमारी ने उसे भोजन करके सो जाने के लिए कहा। रात तो योंही बीत चुकी थी। भोलाराम सारा दिन सोता रहा। संध्या-समय भोलाराम को बुलाकर नाग-कुमारी ने एक दूसरा घोड़ा और एक जंजीर उसे देकर कहा, "तुम उसी नगर में उसी सराय में फिर से जाना और सराय वाले से कहना कि तुम्हारे स्नान के लिए एक पूरा हौज़ पानी से भर दे। फिर हौज़ में पानी भर जाने पर यह जंजीर सराय के मालिक के हाथ में देकर उससे कहना कि ज्योंही उस हौज़ में डुबकी लगाकर तुम ऊपर आओ, वह इस जंजीर से तुम्हारी पीठ पर खूब ज़ोर-ज़ोर से मारना शुरू कर दे। इस प्रकार जंजीर की चोटें खाने के बाद तुम्हारा जो भी हो उसे भोगना, पर जब अपनी नई रानी को पा जाओ तो मेरी बात याद रखना और सात साल तक उसे यह एक भी बात न बतलाना।"

: ४ :

दूसरे दिन प्रातःकाल भोलाराम अपनी यात्रा पर चल खड़ा हुआ। कई दिन बाद वह अपनी उस बेवफ़ा रानी के राज्य में पहुँच गया। संध्या-समय उसी सराय में गया जहाँ पहली बार आने पर टिका था। सवेरा

होते ही उसने सराय के मालिक को बुलाकर स्नान के लिए एक हौज में पानी भरने की आज्ञा दी। पानी भर जाने पर वह स्नान करने के लिए हौज में उतरा और सराय के मालिक को वह जंजीर देकर, जो कुछ नाग-कुमारी ने उससे कहा था वैसा ही करने के लिए उसे समझा दिया।

पीठ पर जंजीर की चोट पड़ते ही वह एक सुन्दर घोड़े के रूप में बदल गया। सराय वाले को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ, किन्तु घोड़े को हौज के बाहर निकालकर वह मन-ही-मन खुश भी हुआ। बोला, "एक मेहमान से छुट्टी मिली, पर दूसरे तुम खूब अच्छे आ गए यार !"

फिर एक घोड़ा भोलाराम वाला और एक घोड़ा भोलाराम स्वयं, इस प्रकार दो घोड़ों को लेकर सराय वाला बाज़ार में उन्हें बेचने गया। संयोग से उस समय बाजार में रानी का पति भी आया हुआ था। सराय के मालिक के दो घोड़ों में एक श्यामकर्ण घोड़ा देख, राजा उस पर लट्टू हो गया और सराय वाले को मुँह-माँगा दाम देकर उस घोड़े को खरीद लाया। राजा के पीछे-पीछे ज्योंही उस घोड़े को लेकर उसके नौकर महल में पहुँचे तो उसे देखते ही रानी चिल्ला उठी। बोली,

"महाराज, महाराज ! यह बड़ा मनहूस घोड़ा आप ले आए। इसे इसी दम मरवा डालिए।"

"मेरी प्यारी, यह तुम्हारा कैसा भ्रम है ? भला कोई ऐसे भी कहता है ?" राजा ने कहा।

"यह तो करना ही होगा, इसी दम करना होगा।" रानी ने कहा।

राजा मजबूर हो गया। उसने आज्ञा दी कि एक जल्लाद कुल्हाड़ी लेकर आये !

ऐसा सुन्दर घोड़ा देखकर सबको उस पर दया आ रही थी, पर न जाने क्यों रानी ने उसकी गरदन कटवाने की ज़िद पकड़ रखी थी। थोड़ी देर बाद हाथ में कुल्हाड़ी लिये जल्लाद वहाँ आ पहुँचा। यह देख रानी की दासियों में से एक, घोड़े के पास जाकर बोल उठी, "हाय रे हाय, तुम जैसे सुन्दर घोड़े को क्या गरदन काटने के लिए ही लोग यहाँ ले आये थे ?"

यह सुनकर घोड़ा दासी के बिलकुल निकट आ गया और बोला, "मेरी गरदन कटे तो कटे, पर एक बूंद मेरा खून उठाकर बगीचे में कहीं मिट्टी के नीचे ज़रूर दबा देना।"

यह सुनकर दासी वहीं खड़ी रही। कुल्हाड़ी के गरदन पर चलते ही एक बूंद रक्त मिट्टी के एक ढेले में

लेकर वह उसे बगीचे के एक कोने में गाड़ आई ।

कुछ दिन बीत गए और यह बात विस्मृत हो गई, किन्तु बरसात में उस स्थान पर हरसिंगार का एक पौधा उग आया । उसमें सात बड़े कोमल-कोमल पत्ते निकले। आश्चर्य की बात यह थी कि वे सातों ही पत्ते रंगीन थे और प्रत्येक भिन्न-भिन्न रंग वाला था—कोई लाल, कोई पीला, कोई बैंगनी, कोई गुलाबी । एक दिन टहलता-टहलता राजा बाग़ के उस कोने में गया तो पौधे को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ । मालियों को बुलाकर उसने उस पौधे की विशेष देख-भाल रखने का आदेश किया ।

रानी को यह बात सुनकर बड़ी उत्सुकता हुई और उस पौधे को देखने वह भी बाग में आई । उसे देखते ही वह चीख़ उठी । बोली, "यह पौधा यहाँ नहीं रहने दिया जायगा । इसे अभी उखाड़कर फेंक देना होगा ।"

मालियों में से एक तुरन्त दौड़ा हुआ राजा के पास गया । राजा ने आकर रानी को बहुत समझाया पर वह एक न सुनती थी । अन्त में राजा को रानी का कहना मानना पड़ा । रानी उस पौधे को उखाड़कर फेंक देने की आज्ञा दे राजा के साथ महल में चली

गई। किन्तु उसकी दासी वहीं रुक गई थी। उसे अच्छी तरह याद था कि उसी स्थान पर उसने उस घोड़े का एक बूँद रक्त गाड़ा था। उसी जगह उस विचित्र पौधे को देखकर दासी को पुरानी बात कुछ याद आई और वह मन-ही-मन बोली, "हाय-हाय, ऐसा कोमल पौधा लोग उखाड़े दे रहे हैं!"

दासी के मुँह से ये शब्द निकले ही थे कि उसके कानों में आवाज़ आई, "कुछ हर्ज नहीं, मेरी प्यारी दयावती! मेरा एक पत्ता तोड़कर चुपके से नदी में डाल तो देना!" मालियों ने जब वह पौधा उखाड़कर फेंक दिया, तो दासी ने उसमें से एक पत्ता तोड़ा और उसे नदी में छोड़ आई।

दूसरे दिन राजा जब शिकार के लिए निकला तो नदी के तट पर पानी में उसे एक बड़ा विचित्र हंस दीख पड़ा। हंस इतना सुन्दर और मनोहर था कि राजा उसे पकड़कर अपने महल में ले जाने के लिए अधीर हो गया। राजा को तट पर खड़े देख हंस ने कुछ भी घबराहट नहीं दिखलाई। इससे प्रसन्न हो राजा ने किनारे बैठकर पानी में हंस की तरफ़ हाथ बढ़ाया। हंस राजा की पहुँच से थोड़ा ही बाहर था। राजा ने अपने वस्त्र उतारकर तट पर धर दिए और हंस को

पकड़ने के लिए जल में प्रवेश किया। ज्यों-ज्यों राजा आगे बढ़ता गया, त्यों-त्यों हंस पीछे खिसकता गया। इस प्रकार राजा जब मझधार में पहुँच गया तो हंस ने एक डुबकी मारी और बाहर उतराया, तो एकदम नदी के तट पर उस जगह जा पहुँचा जहाँ राजा के कपड़े पड़े हुए थे। फिर तो पानी के बाहर हो हंस राजा के कपड़ों के पास खड़ा हुआ। वहाँ पहुँचते ही वह आदमी हो गया। उसने झटपट राजा के सारे कपड़े पहन लिए और उसकी तलवार हाथ में ले ली। यह वही तलवार थी जो नाग-कुमारी ने उसे पहले दी थी और यह वही उसका अंगा था जिसे रानी ने छिपा रखा था।

मध्य-धार में पड़ा हुआ वह राजा तट का दृश्य देख जल्दी-जल्दी तैरकर बाहर आया। किन्तु तट पर उसके पैर रखते ही भोलाराम ने उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले और उन टुकड़ों को नदी में फेंक दिया।

राजसी वस्त्रों से भूषित हो भोलाराम महल में आया। उसे देखते ही उसके स्वामि-भक्त सेवक बहुत प्रसन्न हुए। सब दरबारियों ने एकत्र हो उसका स्वागत किया। डौंडी पिटवाकर मंत्री ने प्रजाजनों को बुलवाकर बड़ा भारी दरबार लगाया। भोलाराम ने दरबार

में सबसे पहले उस युवती दासी को बुलवाया जिसने उसकी दीन दशा पर करुणा करके दो बार उसकी आज्ञा का पालन किया था। उस दासी से उसने कहा, "दो बार मुझे जीवन देकर तुमने मेरे साथ दूसरी माता की तरह उपकार किया है, और अब तुम मेरी दूसरी पत्नी और इस राज्य तथा इस महल की भी रानी बनोगी।" फिर उसने रानी को बुलवाया और एक बड़े बिगड़ैल घोड़े से उसे बँधवाकर नगर से बहुत दूर बियाबान में छुड़वा दिया, जहाँ ज़मीन पर घिस-घिसकर उसका शरीर चूर-चूर हो धूल में मिल गया।

उस दासी को अपनी रानी बनाकर राजा भोलाराम सुख और शान्ति से उस देश पर राज्य करने लगा। उसने अपनी माता की बड़ी खोज की, किन्तु वह अपने गाँव में न मिली। शायद वह स्वर्गवासिनी हो चुकी थी।

कपोत-कुमारी

पुराने ज़माने की बात है, एक गाँव में एक ग़रीब विधवा रहती थी। उस बेचारी के एक लड़के के सिवा दूसरा अपना कोई नहीं था। सयाना होकर विधवा का बेटा ग़रीबी से ऊब गया और कुछ कमाई करने के लिए परदेश जाने की सोचने लगा। उसकी माता नहीं चाहती थी कि उसका इकलौता बेटा उसकी आँखों से ओझल हो, किन्तु बेटे के बार-बार अनुरोध करने से बेचारी को परदेश जाने की अनुमति देनी पड़ी।

कितने ही दिन की यात्रा के बाद एक बड़ी लुभावनी सरिता को पारकर जब वह युवक सुमति एक सुगन्धित वन में होकर जा रहा था, उसे पनस-वृक्षों के झुरमुट के बीच एक बहुत सुन्दर महल दिखाई पड़ा। कुछ ही क्षणों में सुमति उस महल के फाटक पर जा पहुँचा। सुमति को फाटक पर खड़े देख एक विशालकाय पुरुष ने खिड़की में से सिर बाहर निकालकर ठनकती आवाज़ में पूछा, "क्यों रे मानुष के बछड़े ! तू यहाँ क्या करने आया है ?"

सुमति ने डरकर कहा, "श्रीमान्, मैं एक ग़रीब विधवा का बेटा हूँ। अपनी और अपनी माता की गुज़र-बसर के लिए परदेश करने निकला हूँ।"

"तूने झूठ कहा होता तो मैं अभी तुझे चीर-फाड़ डालता, मानुस के बछड़े!" दानव ने कहा, "तूने सच-सच कहा है, इसलिए तुझे ज़िन्दा छोड़ देता हूँ। लेकिन दो-तीन दिन में तू यहाँ से ज़रूर भाग जाना, नहीं तो तेरी जान की खैर नहीं।"

सिर नवाकर सुमति ने दानव का आदेश ग्रहण किया। उसकी विनम्रता से दानव को उस पर कुछ दया अवश्य आई। वह बोला, "देख रे मानुस के बछड़े! समझ ले अच्छी तरह से। कल सवेरे हमारे तालाब में, जो महल के दक्षिण की ओर है, तीन कपोत-कुमारियाँ स्नान करने आयेंगी। वे तीनों एक शिला के नीचे अपने-अपने कबूतर के डैनों वाले अंगरखे (खोल) छिपाकर जल में विहार करने जब उतर जायँगी, तब तुम दबे पाँव शिला के समीप जाकर उन तीनों में से बीच वाला खोल उठाकर वहीं कहीं छिप रहना। फिर जब दो कुमारियाँ बाहर आकर अपना-अपना खोल उठा लेंगी और तीसरा खोल वहाँ न देख वे अचम्भा करने लगेंगी, तब तीसरी अपनी बहनों से अपना खोल ढूंढ़ने के लिए

प्रार्थना करेगी और पानी से बाहर न निकलेगी। तब तुम दो परियों के चले जाने के बाद तालाब के तट पर आकर खड़े हो जाना। तीसरी परी अपना खोल देने के लिए तुमसे बार-बार प्रार्थना करेगी परन्तु तुम साफ इन्कार कर देना। उससे कहना कि पहले तुम यह वचन दो कि हमारी हर मुसीबत में तुम सहायता करोगी, तभी मैं खोल लौटाऊँगा। पहले तो किसी तरह ऐसा वचन देने के लिए वह तैयार न होगी, परन्तु अन्त में उसे देना ही पड़ेगा और तब तुम उसे उसका खोल लौटा देना।"

दूसरे दिन सूरज निकलने से पहले ही महाशय सुमंति तालाब के किनारे जा पहुँचा और एक शिलाखंड के पास बैठकर लगा कबूतर-परियों के आगमन की प्रतीक्षा करने। बहुत देर तक वहाँ बैठे रहने पर भी उसे जब जल में स्नान के लिए उतरती हुई कोई स्त्री न दिखाई पड़ी, तो सुमति को थोड़ी चिन्ता होने लगी। इतने में आकाश में भगवान् सूर्य के दर्शन हुए। उधर तालाब में सिर पर चमकीले सुनहले बालों वाली सहस्र-दल कमल-मुखी तीन अप्सराओं को कल्लोल करते देख सुमति के होश-हवास उड़ गए। उसने जो अगल-बगल झाँका तो पास की ही शिला के नीचे एक कोने में

कबूतर के चिकने परों और डैनों वाले तीन बड़े-बड़े खोल रखे हुए दिखाई पड़े। उनमें से एक खोल मनियरे रंग का, एक सुरमई रंग का और बीच वाला शंख-जैसा श्वेत रंग का था। बात यह हुई थी कि सुमति अपनी समझ से तो बड़े तड़के ही वहाँ आ गया था, किन्तु वास्तव में वे कपोत-कुमारियाँ उससे भी पहले आ गई थीं। कुहासा छाया हुआ था, इस कारण सुमति उन्हें देख नहीं सका था।

सुमति ने मध्यवर्ती खोल झटपट उठा लिया और दूर जाकर छिप गया। थोड़ी देर बाद दो परियाँ बाहर आईं और अपना-अपना खोल उन्होंने पहना। तीसरी परी को जल में ही छोड़ वे चल खड़ी हुईं। परन्तु जाते-जाते इशारे से तीसरी परी को बताती गईं कि उसका खोल गायब है। ज्योंही वे दोनों चली गईं, सुमति परी का खोल लेकर तालाब के किनारे आ खड़ा हुआ। दानव ने जैसे-जैसे कहा था, सुमति ने वैसे-ही-वैसे कपोत-कुमारी से संभाषण किया और अन्त में उस बेचारी को यह वचन देना पड़ा कि वह हर अवसर पर उसकी मदद करती रहेगी।

सुमति ने जब उसका खोल लौटा दिया तो उसने उसे धन्यवाद कहा, और जाती-जाती यह कह गई कि

यदि वह नौकरी चाहता हो तो उसके पिता के महल में आये। अपने पिता के महल तक पहुँचने का रास्ता भी उसने सुमति को बता दिया।

: २ :

दूसरे दिन बड़े तड़के ही सुमति दानव के घर से चल पड़ा और बन-बीहड़, पर्वत-पठार पार करता हुआ पिछले पहर परियों के पिता के प्रासाद में जा पहुँचा। परियों का पिता बड़ा भारी जादूगर था। एक युवक को अपनी पौरी पर खड़े देख उसने पूछा, "क्या चाहिए? यहाँ क्यों आये हो?"

"नौकरी चाहिए, आपकी सेवा के लिए आया हूँ।" सुमति ने कहा।

"यहाँ नौकरों से कड़ा काम लिया जाता है। खूब मेहनत करने की आदत हो तो नौकरी मंजूर करो, नहीं तो अपना रास्ता नापो।" जादूगर राजा ने कहा।

"मालिक, काम करने आया हूँ, अब जाऊँगा कहाँ?" सुमति ने कहा।

राजा ने उसकी तरफ देखकर ज़रा मुस्करा दिया।

दूसरे दिन बड़े सवेरे ही राजा ने नये नौकर को बुलाया और अपने किले के सामने वाले जंगल की ओर

हाथ उठाकर कहा, "जाओ, सामने शीशम के पेड़ों वाला जो यह जंगल है उसे काटकर ज़मीन साफ़ कर डालो। पेड़ों के समस्त तने एक जगह, जड़ें सब दूसरी जगह और डालियाँ सब तीसरी जगह अलग-अलग इकट्ठी करके टाल बना दो। फिर सारी ज़मीन हल से जोत-कर उसमें गेहूँ बो डालो। फिर गेहूँ काटकर कनक पीस-कर रोटी पकाओ और बारह बजने से पहले हम लोगों के भोजन के लिए गरम-गरम रोटियाँ लेकर आ जाओ। अगर रोटियाँ लेकर समय से न आये तो तुम्हारी जान ले ली जायगी।"

सुमति के मुँह से सिर्फ 'कोशिश करूँगा'-भर निकल पाया। वह एक कुल्हाड़ी लेकर चुपचाप जंगल की तरफ चला गया। वहाँ एक वृक्ष के नीचे उदास बैठकर वह अपने भाग्य को कोसने लगा। नौ, दस और ग्यारह बज गए पर बेचारा सुमति उदास बैठा रहा। इतने में वह कपोत-कुमारी उसके सामने खड़ी थी। सुमति को संबोधन कर वह बोली, "ऐसे उदास क्यों बैठे हो, परदेशी ? क्या मैंने वचन नहीं दिया है कि मैं तुम्हारी मदद करूँगी ? लो, अब सुनो, फिक्र मत करो। अपनी आँखें बन्द करो। खबरदार ! जब तक मैं न कहूँ आँखें बन्द ही रखना, नहीं तो गज़ब हो

जायगा।"

सुमति ने ज्योंही अपनी आँखें मूंद लीं, परी ने अपने सिर से कंघा निकालकर ऊपर आसमान में फेंका और कहा, "कंघे, कंघे ! तेरी शक्ति विराट् है ! सारे पेड़ उखड़ पड़ें, जड़, तने, डालियाँ कट जायँ, और अलग-अलग वे जुट जायँ !"

जब तक वह कंघा गिरकर ज़मीन पर पहुँचे, सारे पेड़ गिर चुके थे, उनकी जड़ों, तनों और डालियों के अलग-अलग तीन विशाल टाल लग चुके थे।

राजकुमारी ने फिर दूसरा कंघा निकाला और उसे ऊपर फेंककर कहा, "कंघे, कंघे ! तेरी शक्ति विराट् है ! खेत जुत जायँ, गेहूँ बो उठे, फसल उग आए !"

उसके यह कहते-कहते खेत जुत गया, गेहूँ बोया जा चुका और खेतों में गेहूँ की फ़सल लहराने लगी।

फिर राजकुमारी ने तीसरा कंघा आसमान में फेंक-कर कहा, "कंघे, कंघे ! तेरी शक्ति विराट् है ! गेहूँ की फसल पक जाय, अनाज कट उठे, कनक पीसा जाय और रोटियाँ पक जायँ !"

सुमति को यह जानने की उत्सुकता हो रही थी कि आखिर कपोत-कुमारी यह कर क्या रही है। परी ने उसके मन के भाव को ताड़ लिया और उसके पास

आकर बोली, "अगर तुमने अपनी आँखें खोलीं तो कोई भी काम पूरा न हो सकेगा और हम दोनों का सत्या-नाश हो जायगा।"

सुमति की आँखें बन्द रहीं और तब तक रोटियाँ तैयार हो चुकी थीं। अब बारह बजने में थोड़ी-सी कसर रह गई थी। कपोत-कुमारी के कहने से सुमति ने आँखें खोलीं तो उसके सामने एक नया ही जगत् दिखाई पड़ा। उसके सामने रोटियों की पिटारी रखकर कपोत-कुमारी बोली, "उठो, इसे लेकर दौड़ जाओ! अब बारह बजा ही चाहते हैं।"

रोटियाँ लेकर सुमति बारह बजते-बजते राजा के सामने हाज़िर हो गया। जादूगर ने अपनी खिड़की के बाहर सिर निकालकर देखा तो सारा जंगल कट चुका था। उसे आश्चर्य तो बहुत हुआ, पर अपने मन का भाव छिपाकर बोला, "तुम होशियार लड़के हो।" फिर उसे खाना खा आराम करने के लिए कहकर राजा महल के भीतर अपनी रानी के पास गया, और उससे सारा हाल कह सुनाया। रानी बोली, "होशियार रहना, यह लड़का बड़ा हज़रत जान पड़ता है। हो न हो, तुम्हारी कोई लड़की इसे मंत्र दे रही है।"

"क्या ऊटपटाँग बकती हो!" जादूगर ने कहा,

"हमारी लड़कियों ने तो इसे अभी अच्छी तरह से देखा ही नहीं है।"

शाम को कपोत-कुमारी ने सुमति की कोठरी में जाकर धीरे-से उसे बताया कि राजा कल उसे नदी में गिरी रानी की एक अंगूठी निकाल लाने के लिए भेजेगा। वह चलते समय साथ में एक तलवार ले जाने के लिए कहेगा और कई तलवारें उसके सामने रख देगा। उन तलवारों में जो सबसे पुरानी, छोटी और जंग लगी हो, वही तलवार उठाकर नदी के किनारे चल देना सुमति के लिए उचित होगा।

राजकुमारी के चले जाने पर सुमति निश्चिन्त होकर बिस्तरे पर पड़ रहा। उसे रात-भर खूब अच्छी नींद आई। सवेरा होने पर वह ज्योंही कोठरी के बाहर निकला तो देखा कि राजा के दरवान उसे ले जाने के लिए खड़े थे।

राजा ने सुमति को नदी में गिरी अपनी पत्नी की अँगूठी निकाल लाने की आज्ञा दी, और जब वह जाने लगा तो उसके सामने कई तलवारें रखकर कहा कि नदी में बहुत सी खूंखार मछलियाँ रहती हैं, इसलिए वह एक तलवार ज़रूर अपने साथ रख ले। उनमें जो सबसे पुरानी, छोटी और ज़ंग लगी हुई तलवार थी,

वही सुमति ने उठाकर ले ली, और तेज़ी से नदी का रास्ता पकड़ा।

नदी-तट पर पहुँचकर बेचारा रोने लगा। परन्तु थोड़ी ही देर बाद जब उसने ऊपर सिर उठाया तो देखा कि उसकी कपोत-कुमारी सामने खड़ी थी। मुस्क-राती हुई वह सुमति के पास बैठकर बोली, "इस तरह जी छोटा किया जाता है! मैंने सदा तुम्हारी सहायता करने का वचन नहीं दिया है क्या? अब उठो, कुछ काम करो, ग्यारह बज चुके हैं। अगर बारह बजते-बजते अंगूठी लेकर हमारे पिता के सामने हाज़िर न हो जाओगे तो वह तुम्हें मार डालेंगे।"

बेचारे सुमति की समझ में नहीं आ रहा था कि करे तो क्या करे? तब राजकुमारी ने हँसकर कहा, "सुनो! इस तलवार से मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके फौरन नदी में फेंक दो, जिससे मैं वह अँगूठी जिस किसी मछली के पेट में हो वहाँ से उसे निकालकर ले आऊँ।" सुमति ने कहा कि चाहे उसके प्राण तत्काल वहीं क्यों न ले लिये जायँ, वह ऐसा कदापि न करेगा। राज-कुमारी का वध करना तो असंभव, उसका एक रोआँ भी वह नहीं दुखा सकेगा।

कपोत-कुमारी ने यह सुनकर उसे प्यार-भरे शब्दों

में डाँटा, और कसम खाकर उसे विश्वास दिलाया कि उसे तनिक भी कष्ट न होगा, और पलक मारते ही वह अँगूठी लेकर ज्यों-की-त्यों नदी से बाहर आ जायगी। परी के बार-बार कहने से सुमति किसी प्रकार राजी हुआ और काँपते हाथों और धड़कते हुए हृदय से उसने अपनी तलवार से काम लिया। कुछ ही क्षण बाद कपोत-कुमारी ज्यों-की-त्यों पानी से बाहर निकल आई और सुमति को अँगूठी देकर बोली, "इसे लेकर मेरे पिता के पास दौड़ जाओ। अब बारह बजने ही वाले हैं। पर याद रखो, तुमने मेरे बाएँ हाथ की सबसे छोटी उँगली कम कर दी है।"

बात यह हुई थी कि कपोत-कुमारी की छोटी उँगली सुमति के जूते की नाल में फँसकर बाहर ही रह गई थी, इस कारण बेचारी के एक हाथ में अब सदा के लिए चार ही उँगलियाँ रह गई थीं।

अँगूठी लेकर सुमति ठीक बारह बजे जादूगर के सामने पहुँच गया। उधर राजकुमारी भी महल में पहुँच चुकी थी। उसने अपने कमरे का दरवाजा बड़े ज़ोर से खड़काया, और रो-रोकर कहने लगी, "हाय-हाय! मेरी उँगली दरवाज़े में कट गई!" लोगों को उस बेचारी की एक उँगली कट जाने का बड़ा रंज

हुआ।

राजा ने अँगूठी पाकर सुमति की बड़ी तारीफ की और कहा कि कल तुम्हें एक घोड़े और तीन घोड़ियों को काबू में लाना है। अभी तक उन पर सवारी करने की किसी की हिम्मत नहीं हुई है। सुमति ने कहा, "कोशिश करूँगा।" राजा ने उसे एक मज़बूत डंडा दे दिया।

दिन डूब जाने पर कपोत-कुमारी फिर एकान्त में सुमति के कमरे में आई और बोली, "मेरे पिता ने जिस घोड़े और घोड़ियों के बारे में तुमसे कहा है, वे कोई घोड़ा-घोड़ी नहीं हैं। मेरे पिताजी और हम तीनों बहनें ही उनके जादू के ज़ोर से घोड़ा-घोड़ी बनकर आएँगी। राजा ने जो डंडा तुम्हें दिया है उसे अपने पास रखना। पहले घोड़े की रास हाथ में लेना और उस डंडे से घोड़े के थूथन पर एक हाथ कसकर जमा देना तो वह काबू में आ जायगा। फिर दोनों बड़ी घोड़ियों की पीठ पर भी एक-एक डंडा कसकर जमा देना तो वे भी बस में हो जायँगी। पर तीसरी घोड़ी को मारना तो डंडा ज़मीन पर ही पटकना। वह आसानी से लगाम ले लेगी।

दूसरे दिन घोड़ा और घोड़ियाँ जब उसके सामने

प्रस्तुत की गईं तो उसने ठीक वैसा ही किया जैसा राजकुमारी ने उसे सिखाया था। फिर तो बारी-बारी से वह घोड़े और घोड़ियों की पीठ पर बैठकर सारे नगर की परिक्रमा कर आया। सवेरे जो वह महल में गया तो देखा कि राजा के होंठ और गालों पर काफी सूजन थी, और उसका सारा मुँह काला पड़ गया था। दोनों बड़ी राजकुमारियों की पीठें भी दर्द से अकड़ी हुई थीं। तीसरी बड़ी देर में बिस्तरे से कराहती हुई उठी, जैसे उसके बदन में सबसे अधिक चोट लगी हो।

राजा ने सुमति को देखकर कहा, "तुम बड़े अच्छे नौकर हो और बहुत बुद्धिमान भी हो। मैं तुमसे बहुत खुश हूँ और तुम्हें अपना दामाद बनाकर यहीं रखना चाहता हूँ। मेरी तीनों कुमारियों में से जिस किसी को तुम चुन लोगे उसके साथ तुम्हारा विवाह कर दिया जायगा। कल सवेरे तीनों कुमारियाँ तुम्हारे सामने उपस्थित होंगी। तुम्हें अपनी आँखें बन्द रखकर उनमें से किसी एक को चुनना होगा।"

सुमति ने सिर नवाकर अपने भावी ससुरजी की आज्ञा को मौन से स्वीकार किया।

संध्या-समय सुमति अपनी कोठरी में बड़ी चिन्ता में पड़ा उदास बैठा हुआ था। उसी समय छोटी

राजकुमारी उसके निकट आकर खड़ी हुई और बोली, "इसमें चिंता की कौनसी बात है ? इस समस्या को तो आपने चार दिन पहले ही नदी-किनारे अँगूठी की खोज के समय हल कर रखा है। आप जानते ही हैं कि मेरे बाएँ हाथ में केवल चार उँगलियाँ हैं। सो जब राजकुमारियाँ अपना-अपना हाथ आगे बढ़ायेंगी तो आप उनके हाथ अपने हाथ में लेकर तुरन्त जान लेना कि कौन किसका हाथ है।"

दूसरे दिन प्रातःकाल सुमति महल में बुलाया गया। "तुम जानते ही हो कि हमने तुम्हें यहाँ क्यों बुलवाया है ?" कहकर राजा ने उसकी आँखों में पट्टी बाँध दी। फिर राजकुमारियों को वहाँ आने की आज्ञा हुई और वे तीनों रत्न-आभूषण आदि से सुसज्जित हो सुमति के सामने आ खड़ी हुईं। सुमति ने थोड़ा आगे बढ़कर एक राजकुमारी का हाथ अपने हाथों में लिया और तत्काल उसे छोड़कर कहा, "महाराज, यह हाथ तो बड़ा गरू है, मेरी सँभाल के बाहर है।" फिर दूसरी राजकुमारी आगे बढ़ी और सुमति ने उसका बायाँ हाथ अपने हाथों में ले लिया। वह उतना गरू नहीं था, फिर भी सुमति ने दूसरे ही क्षण उसे छोड़ दिया। इस बार उसने कुछ कहा नहीं। फिर तीसरी राजकुमारी

की बारी आई। उसका हाथ अपने हाथों में लेकर सुमति ने जब अच्छी तरह आँक लिया कि वह चार अँगुलियों वाली श्वेत कपोत-कुमारी का ही हाथ था, तब उसे नहीं छोड़ा और कहा, "महाराज, यह हाथ काफ़ी हलका है, और इसका सँभालना मेरे लिए सम्भव है।"

राजा ने उसकी आँखों पर बँधी हुई पट्टी हटाकर कहा, "अब यह आज से तुम्हारी है।"

उसी दिन कपोत-कुमारी और सुमति का विवाह हो गया। दोनों सुखपूर्वक महल में रहने लगे। किन्तु राजकुमारी की बड़ी बहनें कपोत-कुमारी से बहुत ईर्ष्या रखती थीं और रानी भी सुमति को सन्देह की दृष्टि से देखती थी।

: ३ :

कुछ दिन बीतने पर राजकुमारी ने सुमति से कहा, "हमें शीघ्र ही यहाँ से निकल भागना चाहिए, क्योंकि हमारा पिता हम दोनों को जान से मार डालने की तैयारी कर रहा है।" यह सुनते ही सुमति के रोएँ खड़े हो गए। निदान दोनों ने भागने की तैयारी कर ली, और एक रात वहाँ से भाग खड़े हुए। अपने

जादूगर पिता के महल से निकलते समय राजकुमारी ने अपने शयन-कक्ष के द्वार पर थूककर अपनी पीक से कहा, "मेरी पीक, मेरी पीक ! मेरे स्थान पर तुम्हीं हो। अब मेरी तरफ से तुम्हीं जवाब देना !"

आधी रात के समय जब कि वे दोनों बहुत दूर निकल गए थे, जादूगर उनकी हत्या की सारी तैयारी करके उनके शयन-कक्ष के द्वार पर जा पहुँचा। थोड़ी देर तक इधर-उधर टहलने के बाद उसने दरवाज़ा थपथपाया। भीतर से कोई आवाज़ न आई। तब तो वह ज़ोर-ज़ोर से किवाड़ों के पल्ले भड़भड़ाने लगा। तब भीतर से आवाज़ आई, "कौन आधी रात के समय हमारा दरवाज़ा भड़भड़ाता है ?"

"और कौन होगा ? मेरी आवाज़ तुम लोग पहचानते नहीं क्या ? खोल दो दरवाज़ा फ़ौरन !" राजा ने क्रोध से कहा।

"यह कैसी बात है ?" कमरे में से आवाज़ आई। "ऐसे समय भी कोई पिता अपनी लड़की और दामाद के कमरे को खाली कराना चाहता है ?"

"काम ही ऐसा आ पड़ा है।"

"कौनसा ऐसा ज़रूरी काम आ पड़ा है इस समय ?"

जादूगर इतनी बातें कब सहन कर सकता था! क्रोध के मारे वह जलकर खाक हो गया। उसने गालियाँ दीं, धमकियाँ दीं और फिर विनती भी की, पर दरवाज़ा न खुला, न खुला। खोलता भी कौन? अन्त में उसने उसी दम बढ़ई को बुला लाने की आज्ञा दी। बढ़ई ने आकर दरवाज़ा चीरा। क्रोध में चूर जादूगर कमरे में घुसा तो, पर कमरे को खाली पड़ा देख वह क्रोध के मारे रोने लगा। पागलों की तरह बदहवास दौड़ता हुआ वह महल में अपनी रानी के पास पहुँचा और वहाँ पहुँचकर बोला, "तुम्हारा सोचना ही सच निकला। ज़रूर उन दोनों की शुरू से ही साठ-गाँठ थी। दोनों ही भाग गए।"

"कैसी शर्म की बात है। उन्हें मज़ा न चखाया तो तुम्हें धिक्कार है।" रानी ने डाँटकर कहा।

शर्म और क्रोध में झुँझलाया हुआ गादूगर उसी दम अपने सरदारों को बुलवाकर उन दोनों को पकड़ लाने की योजना बनाने लगा। सबसे अच्छे सोलह घोड़े घुड़साल से निकलवाकर उसने चार-चार वीरों को चारों दिशाओं में रवाना किया। उसकी घुड़साल में जो सबसे तेज़ सफ़ेद घोड़ा था, उस पर सवार होकर सुमति और राजकुमारी पश्चिम दिशा में भागे थे।

यद्यपि वे दोनों काफ़ी दूर निकल गए थे और रात भी समाप्त हो चली थी, फिर भी राजकुमारी को अपने पिता की तरफ़ से पूरा खटका था। इसलिए जब सवेरा हो गया तो उसने अपने पति से पीछे मुड़कर देखने के लिए कहा। सुमति ने पीछे मुड़कर देखा तो उसे दूर पर धूल उड़ती हुई दिखाई दी और रह-रहकर धूल के बादल में बिजली जैसी कोई चीज़ चमक जाती थी।

राजकुमारी ने घोड़े की पीठ पर से उतरकर अपनी कंघी के प्रताप से घोड़े को एक कुएँ के रूप में, अपने पति को एक बूढ़े के रूप में परिवर्तित कर दिया और स्वयं एक घड़ा बनकर कुएँ में तैरने लगी। जब जादूगर के चारों सवार अपना भाला और बरछा चमकाते हुए उनके निकट आ गए तो वहाँ एक बूढे को देखकर उन्होंने पूछा कि कोई कुमार और कुमारी एक सफ़ेद घोड़े पर सवार होकर उधर से गये हैं क्या? बूढ़े (सुमति) ने कहा, "जी हाँ सरदारजी! इधर से गये तो थे ऐसे दो जने, पर बहुत दिन पहले जब मैं जवान था और इधर अपनी भेड़ें चरा रहा था।"

यह उत्तर पाकर वे चारों सवार वापस जादूगर के यहाँ लौट गए। उसने जब बूढ़े की कही हुई बात

उन सवारों के मुँह से सुनी तो तुरन्त समझ लिया कि वह बूढ़ा और कोई नहीं, सुमति ही था। उसने उन सवारों को बन्दीगृह में बन्द कर दिया, और दूसरे सवारों को उसी दिशा में फिर रवाना किया।

दोपहर के समय राजकुमारी ने अपने पति से फिर पीछे मुड़कर देखने को कहा। उसने पीछे मुड़कर देखा तो फिर उसी तरह उड़ती हुई धूल की घनी बदली उसे अपने पीछे दीख पड़ी। राजकुमारी ने घोड़े की पीठ पर से उतरकर अपनी कंघी के प्रताप से इस बार घोड़े को एक पुराना मन्दिर और अपने पति को मन्दिर का बूढ़ा पुजारी बना दिया, और स्वयं मन्दिर की मूर्ति बनकर ठीक बीचों-बीच स्थापित हो गई। जब वे सवार मन्दिर के पास से निकले तो पुजारी को पूजा करते देख वहीं रुक गए और पूछने लगे कि उसने उस तरफ़ से सफ़ेद घोड़े पर सवार किसी राजकुमार और राजकुमारी को उस ओर से जाते देखा है क्या?

उनका प्रश्न सुनकर पुजारी ने कहा, "जी हाँ, इसी तरफ़ से तो गये थे एक ही घोड़े पर सवार एक कुमार और एक राजकुमारी।"

"कितनी दूर गये होंगे वे दोनों, बाबा?" सवारों के सरदार ने पूछा।

"दूर तो वे काफ़ी चले गये होंगे," बूढ़े पुजारी ने कहा, "क्योंकि जब मैं अपना यह मन्दिर बनवा रहा था, उस समय वे इधर से निकले थे।"

पुजारी की ऐसी बात सुनकर उन्होंने समझ लिया कि उस तरफ वे नहीं आये हैं और ऐसा समझकर वे वापस लौट गये। परन्तु जब जादूगर से उन्होंने पुजारी की बात कही तो वह उन पर बहुत नाराज़ हुआ और बोला, "अरे मूर्खो ! वह पुजारी ही सुमति था। तुमने उसे पकड़ क्यों नहीं लिया ?"

अन्त में जादूगर ने स्वयं उनका पीछा करने का निश्चय किया और पवन-वेग से उस दिशा में अपने पैर बढ़ाये। राजकुमारी को अभी तक अपने पिता की तरफ़ से सन्देह था, इसलिए तीसरे पहर उसने अपने पति से फिर पीछे मुड़कर देखने के लिये कहा। सुमति ने पीछे मुड़कर देखा तो उसे एक बहुत आश्चर्यमय और भयानक दृश्य दिखाई पड़ा। एक बड़ा भारी आग का गोला धुएँ के साथ चिनगारियाँ फेंकता हुआ रुण्ड-मुण्ड उनकी तरफ़ लपलपाता चला आ रहा था। क्षण-भर बाद ही उसकी गरमी से इन लोगों के शरीर झुलसने लगे। राजकुमारी ने तुरन्त ताड़ लिया कि यह उसका पिता ही है, जो उन्हें पकड़ने के लिये चला

आ रहा है।

राजकुमारी ने झट अपनी कंघी सिर से निकालकर ऊपर आसमान में फेंक दी और बोली, "कंघी, कंघी! तेरी शक्ति विराट् है! हमारे और जादूगर के बीच एक गहरी नदी लहराने लगे!" कंघी नीचे ज़मीन पर गिर ही रही थी कि पीछे लहराती हुई नदी बहने लगी। उस नदी को पार करके उन्हें पकड़ लेने की उतावली में जब जादूगर पानी में उतरा तो उसके पैर उखड़ गए और वह बह चला। थोड़ी देर में देखते-देखते वह पानी में डूबकर मर गया।

अब सुमति और राजकुमारी निश्चिन्त होकर आगे बढ़े। चलते-चलते जब संध्या हो गई तो उन्हें दूर पर एक नगर दिखाई दिया। एक पेड़ की छाया में जब दोनों थोड़ा आराम करने के लिए बैठे तो राजकुमारी ने अपने पति से कहा, "पतिदेव, दानवों के इलाके की सीमा यहाँ खतम हो गई। सामने वह जो नगर दिखाई दे रहा है, उसमें दानव-कुमारी होने के कारण मैं पैर नहीं रख सकती। इसलिए यदि तुम मुझे चाहते हो तो नगर में जाकर एक एक अच्छे पण्डित को यहाँ ले आओ। वह जब मेरा अभिषेक कर देगा तभी मैं शुद्ध होकर नगर में पैर रख सकूँगी।"

यह सुनकर सुमति किसी पंडित को बुलाने के लिए नगर की ओर चला। जब वह दस-पाँच कदम चल चुका तो राजकुमारी ने उसे पुकारकर रोक लिया और कहा, "प्राणेश्वर, जब तक मेरी शुद्धि न हो ले तब तक आप नगर में किसी को भी स्पर्श मत करना। सावधान! जो मैंने कहा उसे भूल न जाइयेगा।"

पर दुर्भाग्य ऐसा हुआ कि जब सुमति नगर में पहुँचकर एक पंडितजी की गली में जा रहा था, उसकी बुढ़िया मौसी ने उसे देखकर पहचान लिया। प्रेम के आवेश में उसने पीछे ही से सुमति को पकड़कर अपनी छाती से लगा लिया। सुमति भी उसके पैरों पर गिर पड़ा और उसी के साथ उसके घर चला गया। उसकी स्मृति नष्ट हो गई। अपनी प्यारी पत्नी को वह एकदम भूल गया।

: ४ :

इधर शाम बीती और रात हुई, और पति की प्रतीक्षा में तड़पती हुई राजकुमारी की सारी रात भी धीरे-धीरे समाप्त हो गई। तब उसने समझ लिया कि अब वह कभी न आयेगा। ज़रूर किसी से उसका स्पर्श हो गया और अवश्य ही अब वह उसे एकदम भूल गया।

इस प्रकार पिता और पति दोनों ही से एकदम छूटी हुई राजकुमारी को अपनी असहाय दशा पर पहले तो बहुत विषाद हुआ, किन्तु उसमें नारी की दैवी शक्ति, साहस और आशा की कमी नहीं थी। उसने पेड़ के नीचे सूखकर गिरे हुए लकड़ी के एक टुकड़े को उठाकर उससे ज़मीन पर दो बार चोट की, और फिर बोली, "धरती माता, धरती माता ! ध्यान दो। मेरे लिए इसी जगह, इसी क्षण आलीशान होटल खड़ा हो जाय। उसमें सब चीज़ें एकत्र हो उठें—नौकर-चाकर, अन्न-पानी, बर्तन-भाँडे, सभी कुछ।"

क्षण-भर में ही सर्वथा राजकुमारी की इच्छा के अनुसार वहाँ एक होटल आबाद हो गया। होटल से सटा एक बहुत ही रमणीय उद्यान भी लहलहा रहा था। होटल के बड़े फाटक पर मोटे-मोटे सोने के अक्षरों में अंकित था—

'यहाँ बिना दाम भोजन मिलता है।'

कुछ दिनों अपनी मौसी के यहाँ रहने पर सुमति की दो समान वय वाले तरुणों के साथ गहरी दोस्ती हो गई। वे तीनों साथ-साथ रहते, खाना खाते और शिकार खेलने जाते थे। एक बार संयोग से वे उसी जंगल में शिकार खेलने गये, जहाँ कपोत-कुमारी रहती

थी। दिन-भर शिकार खेलने के बाद जब वे थककर लौट रहे थे, तो दूर से उन्हें उस जंगल में एक आलीशान इमारत दिखाई पड़ी। वे लोग उसी तरफ चल पड़े। वहाँ पहुँचकर जब फाटक पर टँगा हुआ वाक्य 'यहाँ बिना दाम भोजन मिलता है' उन्होंने पढ़ा तो उनको बहुत विस्मय हुआ। एक-दूसरे से कहने लगे, "कमाल है, भाई कमाल! इस होटल के बारे में हमने पहले कभी कुछ भी नहीं सुना था। भीतर चलकर ज़रूर देखना चाहिए।"

"ज़रूर देखना चाहिए," दूसरे ने भी कहा, "कौन अपनी गाँठ की कौड़ी खर्च होनी है!"

निदान तीनों मित्र होटल के अन्दर पहुँचे। राजकुमारी ने देखते ही अपने पति को पहचान लिया, किन्तु उसको बार-बार देखकर भी सुमति को उसकी तनिक भी याद न आई। राजकुमारी ने बड़े हर्ष से उन लोगों का स्वागत किया। भोजन के समय जितने पदार्थ उनके सामने रखे गए वे बहुत ही उत्तम और स्वादिष्ट थे। भोजन कर लेने के बाद उन लोगों ने रात वहीं बिताने का प्रस्ताव किया। राजकुमारी ने कहा, "दो आदमियों के सोने का प्रबन्ध यहाँ है, किन्तु तीसरे के लिए अलग जगह नहीं है। हाँ आप लोगों में से एक

कोई अगर मेरे कमरे में सो सके तो फिर कोई अड़चन नहीं।" उसने यह बात इसलिए बनाई थी कि शायद इस आयोजन से उसे अपने पति के स्वागत का शुभ अवसर प्राप्त हो सके। पर सुमति के कुछ कहने से पूर्व ही इसके मित्रों में से एक ने राजकुमारी के कमरे में सोना मंजूर कर लिया।

भोजन-गृह से उठकर दो जने तो सोने के लिए एक कमरे में गये, और तीसरा राजकुमारी के शयन-कक्ष में पहुँचा। उस कमरे में एक ही पलंग था जिस पर राजकुमारी सोया करती थी। सबके सोने का प्रबन्ध करके जब राजकुमारी अपने कमरे में गई तो देखा कि आप साहब उसके पलंग पर इतमीनान से लेटे हुए हैं, और उसे देखते ही पलंग पर एक तरफ इस तरह सरक रहे हैं जैसे यह सोच रहे हों कि उसी पलंग पर राजकुमारी भी सोने के लिए आने वाली हो। उनका अभिप्राय समझकर राजकुमारी बोली, "कुँवर साहब, जब आप छोटे बालक थे उस समय आपकी अम्माजी ने आपको एक तेली की दूकान पर नौकर करवा दिया था। आप उस तेली की आँखें बचाकर उन दिनों अपने सिर में हर समय तीसी का तेल लगा लिया करते थे। तीसी के तेल की बास मुझे बहुत अखरती है, इसलिए अपना

सिर ज़रा तौलिये से पोंछ डालिए, तब आकर पलंग पर लेटिए।"

यह सुनकर वह जवान पलंग से नीचे उतर आया और उस कमरे के एक कोने में चला गया जहाँ खूंटियों पर कई अंगोछे लटक रहे थे। राजकुमारी अपने पलंग पर लेट गई और दिन-भर के काम से थकी होने के कारण लेटते ही उसे नींद आ गई।

उधर आप साहब जैसे-जैसे सिर पोंछते थे, वैसे-ही-वैसे उनके सिर में और अधिक तेल कचमता आता था। न जाने उस तौलिये में ही कोई जादू था या कोई और बात थी। नतीजा यह हुआ कि बेचारे की सारी रात सिर पर तौलिया ही फेरते बीत गई। और राज-कुमारी ? वह तो रात-भर अपने पलंग पर निश्चिन्त सोती रही।

बेचारे कुँवर साहब अपना सिर पोंछ ही रहे थे कि राजकुमारी अपनी नींद पूरी कर बिस्तरा छोड़कर उठ गई। उसे उठते देख वे बोले, "अरे, आप तो अभी से उठ बैठीं !" राजकुमारी बोली, "दिन चढ़े तक सोना क्या कोई तन्दुरुस्त लोगों का काम है ? फिर मेहमानों के लिए सवेरे का नाश्ता और चाय-पानी भी तो तैयार करना है।" बेचारे कुँवर साहब खिसिया-

कर रह गए।

सवेरा होते ही उनके साथियों ने पूछा, "कहो भाई, रात चैन से कटी न ?"

"बेहद चैन से कटी, भाई !" उसने कहा, "और अगर वहाँ आपका समय भी उतनी ही तेज़ी से कटा तो आपकी रात और अधिक चैन से बीतेगी।"

उस दिन वे और रुक गए। रात में भोजन के बाद फिर सोने की समस्या उपस्थित हुई। राजकुमारी ने फिर अपना वही प्रस्ताव पेश किया। इस बार सुमति के दूसरे साथी राजकुमारी के कमरे में सोने गए। जब राजकुमारी अपने कमरे में पहुँची तो पलंग पर उन महानुभाव को लेटे देखकर बोली, "कुँवरजी, आप जब बच्चे थे उस समय आपके पिताजी ने आपको एक भाड़ में कोयला झोंकने के काम में लगा दिया था। दिन-भर नंगे पैर कोयला झोंकते-झोंकते आपकी चमड़ी के भीतर तक एक तह कोयले की जम गई है। देखिए न, आपके लेटने से पलंग की सफेद चादर इतनी थोड़ी-सी देर में ही काली पड़ गई। सो आप कृपया अपने पैर अच्छी तरह से धो-पोंछकर आइए और तब सोइए।"

बेचारे कुछ शरमाए हुए-से उठ खड़े हुए।

राजकुमारी पलंग पर जाकर लेट रही और शीघ्र ही उसे गहरी नींद आ गई। उधर आप साहब कमरे के कोने में, जहाँ मोरी के पास पानी भरी एक नाँद रखी थी, चले गये, और लगे उसमें से पानी निकाल-निकालकर अपने पैर धोने। एक बार पैर धोकर ज्यों ही वह उसे पोंछने लगते थे, तौलिये की रगड़ से न जाने कहाँ से काला-काला कोयले का मैल निकलता आता था। बेचारे की सारी रात पिंडलियाँ मलते और एड़ियाँ रगड़ते ही बीत गई।

उधर अपनी नींद पूरी करके जब राजकुमारी पलंग छोड़कर उठ खड़ी हुई तो आप साहब मोंरी के पास खड़े थे। बोले, "अरे, अरे! आप चलीं कहाँ?"

"चली कहाँ? भई, खूब बोले आप। नींद पूरी हो जाने पर बिस्तरे में छिपा रहना भारी मनहूसियत है। फिर आप लोगों के लिए नाश्ता और चाय भी तो तैयार करनी है।" राजकुमारी ने कहा और अपनी दिनचर्या आरम्भ कर दी। बेचारा शिकारी अपने प्रथम साथी ही जैसा खिसियाकर रह गया।

तीसरे साथी के लिए भी एक दिन रुक जाने का उन्होंने निश्चय किया। उस रात राजकुमारी के कमरे में सुमति के सोने की पारी आई। राजकुमारी ने उन

महाशय का पहले दोनों पाहुनों से कहीं अच्छा स्वागत किया। उन दोनों शिकारियों को तो एक ही स्थान पर खड़े रहकर या बैठकर सारी रात बितानी पड़ी, किन्तु इन महाशय को बत्ती बुझाकर पलंग पर आने के लिए सारी रात चिराग़ ही गुल करते-करते बीत गई। ज्योंही एक दीपक बुझाकर ये पलंग की तरफ बढ़ते थे, किसी कोने से कोई दूसरा दीपक जल उठता था। जब सवेरा होने को आया तो राजकुमारी बिस्तर पर से उठ खड़ी हुई। सुमति ने कहा, "अरे, यह कैसी बात, अभी तो मैं लेटा ही नहीं।"

"यही तो बात है," राजकुमारी ने कहा, "जो मेरी समझ में भी कुछ नहीं आती है। दिन हो जाने पर आपका चिराग़ बुझाना तो सबकी समझ में आ सकता है, परन्तु सवेरा हो जाने पर सोने के लिए पलंग पर जाना किसी की समझ में नहीं आ सकता।"

बेचारा सुमति शरमाकर रह गया। आखिरी चिराग़ बुझाने के लिए उसने ज्योंही हाथ बढ़ाया, राजकुमारी ने खिड़की खोल दी। इस बार सुमति ने चिराग जो बुझाया तो कमरे में दूसरा दीपक फिर न जला; किन्तु खिड़की खुलते ही सारे संसार को प्रकाशित करने वाला प्राची का दीपक सामने जगमगा रहा

था। उसको बुझाकर रात लौटा लाने की शक्ति बेचारे सुमति में कहाँ थी !

राजकुमारी खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली, "कुँवर साहब, आप ही जैसे एक महाशय अपनी पत्नी को जंगल में बिठाकर शहर में उसके लिए कुछ लेने गये तो ऐसे बेचारी को भूल बैठे कि कई साल बाद उसके कमरे का चिराग़ बुझाने आये। क्यों साहब ? किसी सती के दिल का चिराग़ क्या ऐसी आसानी से बुझाया जा सकता है ?"

इतना सुनते ही सुमति राजकुमारी को बड़े ग़ौर से देखने लगा। राजकुमारी ने कहा, "कहिए, आपको क्या हो गया है ? कहीं कुछ भूल तो नहीं गए हैं ?"

अन्तिम वाक्य सुनते ही सुमति के दिमाग़ से विस्मृति का परदा एकदम उठ गया। उसे एकदम सारी बातें याद आ गईं। "मेरी प्यारी पत्नी, मैंने तुमको बहुत दुख दिया, मेरे कारण तुमने बहुत तकलीफें उठाईं।" कहते-कहते सुमति ने अपनी पत्नी को भुजाओं में भरकर गोद में उठा लिया। दोनों की आँखों से देर तक प्रेम की अश्रु-धारा बहती रही। फिर सुमति ने अपनी मौसी का स्पर्श होने से किस प्रकार अपनी सारी स्मृति खो दी थी, उसका हाल विस्तार से राजकुमारी

को सुनाया।

"पतिदेव, वही काम आपको फिर से करना है," राजकुमारी ने बिहँसते हुए कहा, "पर देखिए, वैसी गफ़लत इस बार न होने पाए नहीं तो फिर मुझे जीवित न पाइएगा।"

सुमति ने इस बार पर्याप्त सावधानी से काम लिया। एक पंडितजी को साथ लेकर वह शीघ्र ही उस स्थान पर वापस आया। शुद्धि के बाद वह अपनी प्यारी पत्नी को लेकर नगर में गया। नगर में पहुँचकर एक सुडौल समतल भूमि को देखकर राजकुमारी ने लकड़ी ज़मीन पर पटककर कहा, "इस जगह इसी समय एक आलीशान महल खड़ा हो जाय। महल में आराम की सभी वस्तुएँ सजा दी जायँ। महल के सामने सुन्दर उपवन, उपवन में फूल और फल, पेड़ों पर चहचहाती हुई चिड़ियाँ, घुड़सालों में घोड़े, महल में नौकर-चाकर, सब सुस्थिर और सुव्यवस्थित हो जायँ।" राजकुमारी के कहने की देर थी। भव्य महल खड़ा हो गया, उसमें चहल-पहल होने लगी, बाग़ में तरुवर और लताएँ तथा पेड़ों पर तरह-तरह के फल-फूल लहराने लगे।

उसी महल में सुमति और कपोत-कुमारी सुख और शान्तिसहित राजा-रानी बनकर निवास करते थे।

महानाविक मणिभद्र

: १ :

बहुत पुराने समय की बात है, सागर-तट पर बसे एक अति प्राचीन नगर में महानाविक मणिभद्र नाम के एक बहुत अनुभवी और गुणवान् नाविक रहते थे। अपने विशाल जहाज़ों पर सामान लादकर उस प्रसिद्ध नाविक ने समुद्र में बड़ी लम्बी यात्राएँ की थीं और अपार धन भी पैदा किया था, किन्तु उनके जीवन में एक ऐसा समय भी आया जब कि एक ही वर्ष के भीतर उनके बहुतेरे जहाज़ सामानसहित समुद्र में डूब गए। इस कारण बहुत निर्धन होकर नगर के एक कोने में वह अपना समय व्यतीत कर रहे थे। उनकी पत्नी और दो बेटियाँ कपड़े सीकर जो थोड़ा-बहुत कमा लेती थीं, उसी से उन लोगों को गुज़र-बसर हो रही थी। निर्धनता के कारण बेचारे अपने बेटियों के हाथ पीले न कर पाए थे।

अपने घर के भीतर पड़े-पड़े कभी अतीत के मधुर सपनों की मीठी कसक में, और कभी धुँधले अदृष्ट की

चिन्तामय विवशता और आकुलता में वह दिन तो किसी प्रकार काट लेते थे, किन्तु सन्ध्या के समय घर में रहना उनके लिए कठिन हो जाता। न जाने कौनसी अज्ञात प्रेरणा उन्हें समुद्र-तट पर खींच ले जाती थी।

एक दिन की बात है कि ऐसी ही सन्ध्या के समय जब वह समुद्र-तट पर टहल रहे थे, पानी में एक महा-व्याल दिखाई पड़ा। उसे मारने के लिए आसपास के मल्लाहों को ललकारने के बजाय महानाविक ने उस व्याल का कुछ समय तक अवलोकन किया, और फिर धीरे से कहा, "तुम्हें भी परमात्मा ने ही जीवन दिया है। तो जब तक बने हो, बने रहो!"

दूसरे दिन संध्या-समय जब मणिभद्र समुद्र-तट पर टहलने गये तो उन्हें वही सर्प फिर दिखाई पड़ा। उसे देखकर उन्होंने फिर वैसा ही कहा, जैसा कि पिछले दिन कहा था। यह सिलसिला कई दिन तक चलता रहा। फिर एक दिन मणिभद्र की बात पूरी होते ही सर्प ने बोलना शुरू कर दिया और महानाविक स्थगित होकर ध्यान से सुनने लगे। सर्प ने कहा, "महानाविक, तुम आज ही पोतवणिक महादत्त के पास जाकर पाँच हज़ार मन बोझ सहन करने लायक एक बड़ा जहाज़ तैयार करने का आदेश कर दो। उसके लिए वह जितना धन

माँगे उसे उससे दूना देने का वचन दो और सारी कीमत पहले चुकाकर शीघ्र-से-शीघ्र उस जहाज़ को तैयार कर देने के लिए अनुरोध करो।" मणिभद्र ने वैसा ही किया जैसा कि उस सर्प ने कहा था, और दूसरे दिन शाम को जब फिर नित्य नियम के अनुसार समुद्र-तट पर टहलने आये तो महाव्याल को इसकी सूचना भी दे दी। महासर्प ने दूसरे दिन बारह आदमियों को साथ लेकर वहाँ आने के लिए उससे कहा, और फिर आप जल में डुबकी ले ली।

मणिभद्र बिहान को बारह आदमियों को साथ लेकर समुद्र-तट पर गये। थोड़ी ही देर बाद महाव्याल अपने विशाल आकार में एक बड़ा भारी सन्दूक लपेटे हुए पानी के ऊपर आया और उसे मणिभद्र के हवाले करके उसमें से जहाज़ की सारी कीमत महादत्त को पहले चुका देने का आदेश किया। जहाज़ के निचले भाग में थोड़ा-सा पोला स्थान रखने के लिए मणिभद्र से कहकर वह फिर जल में चला गया। मणिभद्र के बारहों कर्मचारी एक मोटे रस्से में बाँधकर बाँसों के सहारे सन्दूक को महानाविक के घर ले आए। फिर दूसरे दिन जब मणिभद्र ने महादत्त को जहाज़ की सारी कीमत पहले चुका दी तो पोतवणिक को बहुत आश्चर्य

हुआ। थोड़े दिन में जहाज़ तैयार हो गया।

जहाज़ के निर्माण का समाचार मिलने पर सर्प ने मणिभद्र को एक बड़ी पिटारी लाने की आज्ञा दी, और जब वह पिटारी लेकर आया तो सर्प जल के बाहर आकर उस पिटारी में बैठ गया। उसकी आज्ञा से वह पिटारी जहाज़ के निचले भाग में उस पोली जगह में रखवा दी गई, और जहाज़ अपनी यात्रा पर रवाना हुआ।

दिन-भर की यात्रा के बाद रोज़ शाम को महानाविक जहाज़ के निचले भाग में सर्प से भेंट करने जाया करते। दूसरे नाविकों से यह बात गुप्त रखी गई थी। अतः किसी को यह मालूम नहीं होने पाता था कि महानाविक जहाज़ के निचले भाग में रोज़ क्यों जाया करते हैं। उन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि वे किस देश को जा रहे हैं। एक दिन सर्प ने महानाविक से कहा, "आज रात को भारी तूफ़ान उठेगा, और ऐसा जान पड़ेगा कि आकाश और पृथ्वी मिलकर एक हो गए हैं। फिर ठीक अर्ध-रात्रि में एक विशालकाय काला पक्षी जहाज़ के ऊपर मँडराता हुआ दिखाई देगा। यदि वह पक्षी मारा न गया तो जहाज़ डूब जायगा।"

यह सुनकर महानाविक बहुत दुखी हुआ, किन्तु सर्प ने उसे प्रोत्साहित करके नाविकों में से जो कोई

निशानेबाज़ हो उसे उस पक्षी को मार गिराने के लिए नियुक्त कर देने की सलाह दी। महानाविक ने ऊपर आकर पूछ-ताछ की। उसके नाविकों में एक बड़ा अच्छा निशानेबाज़ था जो उड़ती चिड़िया को भी अपने तीर के निशाने से मार गिराता था। महानाविक ने यह समाचार सर्प को दिया। सर्प ने नाविक के लिए अत्यन्त स्वादिष्ट और बलदायक शरबत की एक बोतल दी।

तूफ़ान आरम्भ होते ही उस नाविक को उस बोतल का शरबत पिलाकर कूपक से बाँध दिया गया। जैसे-जैसे रात खिसकने लगी तूफ़ान की भयंकरता बढ़ने लगी। जहाज़ पर के सभी प्राणी त्राहि-त्राहि करने लगे और रात के ठीक बारह बजते ही आकाश में एक बहुत ही डरावनी आवाज़ होने लगी। फिर एक विशाल-काय पक्षी जहाज़ के ऊपर मँडराने लगा। उसी समय मस्तूल के साथ बँधे हुए निशानेबाज़ नाविक ने अपना तीर साधकर उसके ऊपर छोड़ दिया। तीर ठीक उस पक्षी के हृदय में लग गया, जिससे रक्त का फुहारा जहाज़ पर और पानी में चारों तरफ़ गिरने लगा। महाभीषण विलाप करता हुआ कुछ देर तक मँडराने के पश्चात् वह पक्षी भी धपाधप् पानी में गिर पड़ा। उसके समुद्र

हुआ। थोड़े दिन में जहाज़ तैयार हो गया।

जहाज़ के निर्माण का समाचार मिलने पर सर्प ने मणिभद्र को एक बड़ी पिटारी लाने की आज्ञा दी, और जब वह पिटारी लेकर आया तो सर्प जल के बाहर आकर उस पिटारी में बैठ गया। उसकी आज्ञा से वह पिटारी जहाज़ के निचले भाग में उस पोली जगह में रखवा दी गई, और जहाज़ अपनी यात्रा पर रवाना हुआ।

दिन-भर की यात्रा के बाद रोज़ शाम को महानाविक जहाज़ के निचले भाग में सर्प से भेंट करने जाया करते। दूसरे नाविकों से यह बात गुप्त रखी गई थी। अतः किसी को यह मालूम नहीं होने पाता था कि महानाविक जहाज़ के निचले भाग में रोज़ क्यों जाया करते हैं। उन्हें यह भी ज्ञात नहीं था कि वे किस देश को जा रहे हैं। एक दिन सर्प ने महानाविक से कहा, "आज रात को भारी तूफ़ान उठेगा, और ऐसा जान पड़ेगा कि आकाश और पृथ्वी मिलकर एक हो गए हैं। फिर ठीक अर्ध-रात्रि में एक विशालकाय काला पक्षी जहाज़ के ऊपर मँडराता हुआ दिखाई देगा। यदि वह पक्षी मारा न गया तो जहाज़ डूब जायगा।"

यह सुनकर महानाविक बहुत दुखी हुआ, किन्तु सर्प ने उसे प्रोत्साहित करके नाविकों में से जो कोई

निशानेबाज़ हो उसे उस पक्षी को मार गिराने के लिए नियुक्त कर देने की सलाह दी। महानाविक ने ऊपर आकर पूछ-ताछ की। उसके नाविकों में एक बड़ा अच्छा निशानेबाज़ था जो उड़ती चिड़िया को भी अपने तीर के निशाने से मार गिराता था। महानाविक ने यह समाचार सर्प को दिया। सर्प ने नाविक के लिए अत्यन्त स्वादिष्ट और बलदायक शरबत की एक बोतल दी।

तूफ़ान आरम्भ होते ही उस नाविक को उस बोतल का शरबत पिलाकर कूपक से बाँध दिया गया। जैसे-जैसे रात खिसकने लगी तूफ़ान की भयंकरता बढ़ने लगी। जहाज़ पर के सभी प्राणी त्राहि-त्राहि करने लगे और रात के ठीक बारह बजते ही आकाश में एक बहुत ही डरावनी आवाज़ होने लगी। फिर एक विशाल-काय पक्षी जहाज़ के ऊपर मँडराने लगा। उसी समय मस्तूल के साथ बँधे हुए निशानेबाज़ नाविक ने अपना तीर साधकर उसके ऊपर छोड़ दिया। तीर ठीक उस पक्षी के हृदय में लग गया, जिससे रक्त का फुहारा जहाज़ पर और पानी में चारों तरफ़ गिरने लगा। महाभीषण विलाप करता हुआ कुछ देर तक मँडराने के पश्चात् वह पक्षी भी धपाधप् पानी में गिर पड़ा। उसके समुद्र

में गिरते ही सारा कोलाहल शान्त हो गया और जहाज़ तेज़ी के साथ फिर आगे बढ़ा। महानाविक सर्प को यह समाचार देने के लिए नीचे गया और उससे बोला, "वह पक्षी तो मारा गया।"

"यह तो मुझे मालूम है," सर्प ने उत्तर दिया।

प्रातःकाल होते ही नाविकों को दूर पर समुद्र-तट की आहट मिलने लगी, और वे सब अपने नाच-गान द्वारा आनन्द प्रकट करने लगे। महानाविक ने जाकर सर्प से पूछा कि जहाज़ का लंगर कहाँ गिराना है? सर्प ने कहा कि अब जहाँ कहीं किनारा दिखाई पड़े वहीं जहाज़ को खड़ा कर देना है। दोपहर होते-होते जहाज़ समुद्र के तट पर जा लगा। महानाविक की आज्ञा से लंगर गिरा दिया गया।

: २ :

जहाज़ रुक जाने पर सर्प ने मणिभद्र से कहा, "नाव पर जो सबसे अधिक दौड़ने वाला व्यक्ति हो अब उसकी आवश्यकता आ पड़ी है।" मणिभद्र ने पता लगाकर बताया कि उसके नाविकों में एक ऐसा भी है जो भागते हुए खरगोश को भी दौड़कर पकड़ लेता है। तब सर्प ने कहा, "उस नाविक को जहाज़ से उतरकर

सामने जो पहाड़ी दिखाई दे रही है उस पर चढ़ जाने के लिए कहो। वहाँ जाने पर उसे एक छोटा-सा घर दिखाई देगा। उस घर में एक चूल्हा है जिसमें दिन-रात आग जल रही है। चूल्हे के पास एक चकमक पत्थर, लोहे का टुकड़ा और पतली-पतली लकड़ियों से भरा एक काठ का छोटा-सा सन्दूक रखा हुआ है। एक बुढ़िया वहीं बैठी चूल्हे की रखवाली करती रहती है। उससे कहो कि उसे वे तीनों ही चीज़ें एक-एक करके तीन बार में वहाँ से अपने जहाज़ पर उठा लानी हैं।"

महानाविक की आज्ञा पाकर वह नाविक जहाज़ छोड़कर उस पहाड़ी की तरफ़ चला गया। पहाड़ी पर चढ़कर जब कुटिया के पास पहुँचा तो उसे सबसे पहले उस धधकते हुए चूल्हे के पास लाल-लाल आँखों वाली बुढ़िया ज़मीन पर बैठकर चरखा कातती हुई दिखाई दी। नाविक ने पास जाकर उसे प्रणाम किया और बड़ी विनम्रता से कहा, "माताजी, मैं प्यास से तड़पता हुआ बहुत देर से इस पहड़िया में भटक रहा हूँ। मुझे कहीं कोई जल देने वाला दिखाई नहीं दे रहा है। दया करो अम्मा! बड़ा पुन्न होगा। थोड़ा-सा जल पिला दो!"

"जाओ, चले जाओ यहाँ से। यहाँ कहाँ पानी

धरा है ?" उस चुड़ैल ने भनभनाकर कहा। पर वह नाविक कहाँ टलने वाला था ! वह बार-बार गिड़-गिड़ाकर बुढ़िया से प्रार्थना करता रहा। कुछ देर बाद बुढ़िया ने चरखा कातना रोककर अपने घर की छत की तरफ ताका। नाविक ने कहा, "अम्मा, अब ज़रा तकलीफ़ कर दो न !" बुढ़िया को दया आ गई, या शायद उसे थोड़ा पानी पिलाकर वहाँ से टरकाना ही उसने उचित समझा। जो भी हो, वह अपनी जगह से उठी। ज्योंही चूल्हे की तरफ़ उसकी पीठ हुई नाविक ने झपटकर चकमक पत्थर उठा लिया और बिजली की तरह वहाँ से दौड़ता हुआ भागने लगा। बुढ़िया ने उसके भागने की आवाज़ सुनी तो झट चूल्हे के पास आ गई। पल-भर में सब-कुछ समझकर वह भी उसी के समान तेज़ी से उसके पीछे दौड़ने लगी। बुढ़िया नाविक का पीछा करती हुई समुद्र-तट तक पहुँचते-पहुँचते उसके बिलकुल करीब आ गई थी, अतः तट पर से कूदकर ज्योंही नाविक जहाज़ पर चढ़ने लगा, बुढ़िया के हाथों में उसका कोट आ गया। पीछे से उसे पकड़कर बुढ़िया ने जो नोंचा तो कपड़े के साथ ही बरछी की नोंक-जैसे तेज़ नाखूनों से बेचारे की पीठ पर की चमड़ी उधड़ गई।

सर्प के पास जाकर महानाविक ने वह चकमक पत्थर प्रस्तुत कर दिया, और नाविक की वीरता तथा उसके घायल होने का समाचार विस्तार से उसे कह सुनाया। सब-कुछ सुनकर सर्प ने उस नाविक के घाव पर लगाने के लिए विलेपन की एक डिबिया महानाविक को दी, और कहा कि उस विलेपन से दूसरे दिन सुबह तक उसका सारा घाव भर जायगा। सारी थकान भी जाती रहेगी। सचमुच उस विलेपन से रात-भर में ही नाविक का सारा घाव भर गया।

महानाविक सवेरे उसे देखने गया और उसकी वीरता तथा साहस का बखान करके उसे खूब प्रोत्साहित किया। बात-ही-बात में महानाविक ने लोहा और सन्दूक लाने की भी चर्चा की। यह बात सुनकर नाविक बोला, "मालिक, अब आप मुझसे इसके लिए कुछ न कहना। अगर आप कहें तो नरक में चले जाने के लिए भले ही मैं तैयार हो जाऊँगा, लेकिन अङ्गारे बरसाती हुई उन आँखों का सामना मुझसे न होगा।"

महानाविक ने सर्प के पास जाकर नाविक की यह बात कह सुनाई। तब सर्प ने नाविक के लिए शरबत का एक बोतल दिया। वह शरबत पीते ही नाविक में

नई उमंग और नया जोश भर आया। यह देख महा-नाविक ने उसे फिर एक बार अपनी वीरता तथा साहस का प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित किया। नाविक राजी हो गया और फिर उस टेकरी की तरफ़ चल खड़ा हुआ।

इस बार उसने बिना आस्तीन वाली पुरानी कमीज़ और एक फटा हुआ पाजामा पहना और हाथ में एक चिलम लेकर लँगड़ाता हुआ उस बुढ़िया के सामने उपस्थित हुआ। बुढ़िया एक अपरिचित को अपनी झोंपड़ी के सामने आए देख लाल-लाल आँखों से उसे घूरने लगी, पर नाविक वहीं खड़ा रहा। फिर दो कदम आगे बढ़कर उसने बड़ी दीनता के साथ कहा, "मतवाराम, तीन दिन हुए, मेरी नाव किनारे ही एक शिला से टकराकर चूर-चूर हो गई। मैं अड़तालीस घण्टों से मारा-मारा फिर रहा हूँ। अब तक मेरे मुँह में अन्न का एक दाना भी नहीं गया है। माताजी, मेरी चिलम में एक अङ्गारा दे दो तो मैं अपनी तमाखू पी लूँ।"

"जा-जा, चला जा यहाँ से," बुढ़िया ने गुर्राकर कहा।

"अरे मतवाराम, थोड़ी-सी किरपा कर दो। मेरी

बिपत पर कुछ तो रहम खाओ।"

"नहीं, बिलकुल नहीं। तुम्हारी ही शकल का एक धूर्त कल यहाँ आया था और मुझको ठग ले गया। जा, सीधा चला जा यहाँ से," बुढ़िया ने कहा।

"माताजी, क्या दुनिया में सब ठग ही होते हैं? भला बताओ तो सही, मैं आपको किस तरह ठगूँगा?" नाविक ने कहा।

बुढ़िया ने कोई जवाब न दिया और नाविक ने अपनी चिलम उसके सामने धर दी। बुढ़िया ने चिलम उठा ली और ज्योंही उसमें एक अङ्गारा रखने के लिए चूल्हे की तरफ़ मुँह किया कि नाविक ने झटपट लोहे का टुकड़ा उठा लिया और भागा पत्ते तोड़ वहाँ से। बुढ़िया भी चिलम फेंककर उसके पीछे-पीछे दौड़ चली। थोड़ी देर तक दोनों ही पवन-वेग से दौड़ते रहे। उनके बीच में चार गज़ का अन्तर जो आरम्भ में था, अन्त तक बना रहा। थोड़ी देर में दोनों ही समुद्र-तट पर पहुँच गए। जब नाविक छलाँग मारकर जहाज़ पर कूद रहा था, उसकी कमीज़ का एक छोर बुढ़िया के हाथ में आ गया। उसने अपने नाखून गड़ाकर जो खींचा तो गरदन से लेकर कमर तक उसकी कमीज़ और पीठ की खाल खिच आई।

बेचारा नाविक जहाज़ पर गिरकर बेहोश हो गया।

महानाविक ने तुरन्त सर्प के पास जाकर सारा हाल कह सुनाया। सर्प ने घाव पर लगाने के लिए एक दूसरा मरहम ग्रौर पीने के लिए शरबत की एक दूसरी बोतल महानाविक को दी। उस विलेपन से नाविक का सारा जख़म रात-भर में ही भर गया। किन्तु ग्रब तीसरी बार उस बुढ़िया का सामना करने के लिए वह किसी भी तरह तैयार नहीं था। महानाविक ने उसे बहुत समझाया। बहुत कहने-सुनने पर वह तीसरी बार उस पहाड़ी पर जाकर लकड़ी वाला छोटा संदूक ले ग्राने के लिए राजी हुग्रा।

इस बार नाविक ने केवल एक पुराना जाँघिया पहना था। ग्रपना पेट खलाए एक लाठी के सहारे धीरे-धीरे टेंकरी पर चढ़ा। ग्रत्यन्त दीन-दुखी भिखारी का भेष धारण किये हुए वह जब बुढ़िया की झोंपड़ी के सामने पहुँचा तो इसे देखते ही वह ग्राग-बबूला हो गई। तड़फकर बोली, "न जाने कहाँ से इतने ढेर-भर मेरे दुश्मन मेरे पीछे पड़ गए हैं? ख़बरदार, ग्रगर तुमने मेरी डेवढ़ी के भीतर पैर रखा तो तुम्हारी ख़ैरियत नहीं।"

"माताजी, मेरी-ग्रापकी क्या दुश्मनी हो सकती

है ?" नाविक ने कहा, "यह पापी पेट सब करा रहा है, माताजी, नहीं तो आप-जैसी देवी मुझे ऐसी झिड़की क्यों सुनातीं ? घर में रोटी का एकाध टुकड़ा पड़ा हो तो फेंक दीजिए। मैं उसे मुँह में रखकर उल्टे पैर चला जाऊँगा। पीने के लिए पानी तक न माँगूँगा। आज दो दिन से अन्न का एक दाना भी पेट में गया हो तो क़सम ले लीजिए।"

बुढ़िया के पास दो दिन की बासी एक रोटी पड़ी थी। उसने सोचा कि वह रोटी इसे दे दी जाय। वह उठकर खड़ी हुई और रोटी लाने के लिए बगल वाले कमरे की तरफ़ चली। ज्यों ही उसकी पीठ नाविक की तरफ़ हुई, उसने झटपट लकड़ी वाला सन्दूक उठाया और बड़ी तेज़ी से भागना आरम्भ कर दिया। बुढ़िया भी हाथ में रोटी लिये हुए ही उसके पीछे दौड़ी। थोड़ी देर में ऐसा मालूम होने लगा कि बुढ़िया उसे पकड़ लेगी। पर यह आख़िरी बाज़ी थी और दोनों ही यह बात अच्छी तरह जानते थे। उस पिटारी का जहाज़ में पहुँच जाना बुढ़िया के लिए मृत्यु का न्योता था और बुढ़िया के हाथों में पड़कर उसके नाख़ूनों से चिथड़े-चिथड़े होकर मरना नाविक के लिए बड़ा ही भयानक और दिल दहला देने वाला काण्ड था। इसलिए इस

बार की दौड़ में दोनों ही जान पर खेल रहे थे। परन्तु परमात्मा जिसको यश और सफलता देना चाहता है उसे कोई शक्ति पीछे नहीं रोक पाती। अन्त में हमारा नाविक समुद्र-तट पर पहुँच ही गया। किन्तु जब वह जहाज़ पर कूदकर पहुँचने के लिए छलाँग भर रहा था, बुढ़िया ने उसकी गरदन के पास अपने नाखून धँसा दिए और एक तरफ़ तो वह उचककर जहाज़ के तख्ते पर पहुँचा और उसी क्षण दूसरी तरफ़ गरदन से एड़ी तक उसकी चमड़ो बुढ़िया के हाथों में खिच आई। नाविक लहू-लुहान बेहोश जहाज़ पर गिर पड़ा। बुढ़िया को उसके मर जाने में कोई सन्देह न रहा। फिर भी उसका क्रोध कम नहीं हुआ। आँखों से आग बरसाती, श्राप और गाली देती हुई जाती-जाती वह कहती गई, "जाओ, नरक में पड़ो तुम सब-के-सब ! तुम सबको मेरी तिलांजलि है !"

महानाविक ने वह पिटारी ले जाकर सर्पराज के सामने रख दी। सर्पराज उसे पाकर बहुत प्रसन्न हुए, किन्तु महानाविक को उदास और दुखी देखकर वे उस नाविक के सम्बन्ध में पूछ-ताछ करने लगे। महानाविक ने कहा, "महाराज, बेचारा वह नाविक बुढ़िया के नखों से विदीर्ण होकर अपनी अन्तिम साँसें ले रहा

है।" नागराज ने आश्वासन देते हुए महानाविक से कहा, "आप कुछ चिन्ता न करो। अब जो मरहम और शरबत हम उसके लिए दे रहे हैं उसके प्रयोग से कल सबेरे तक वह फिर पहले ही जैसा स्वस्थ और प्रसन्न हो जायगा। इस वीर ने हम सब लोगों के प्राण बचा लिए हैं, नहीं तो मेरे ही समान तुम सब लोग भी उस डाइन के चंगुल में फँस चुके थे। अब इस खुशी के अवसर पर तुरन्त सात बार तोप दागने की व्यवस्था करो और फिर मेरे पास आ जाओ!"

: ३ :

सात बार तोपें दगवाकर महानाविक फिर सर्प के पास आया। तब सर्प ने उससे कहा, "महानाविक, बारह बार और तोपें दागी जानी चाहिए।"

महानाविक ने बारह बार फिर तोपें दगवाईं और सर्प के पास आकर इस बात की सूचना दी। तब सर्प ने कहा, "अब थोड़ी ही देर में पुलिस के सिपाही यहाँ आयेंगे और तुम सबको हाथों में हथकड़ियाँ डालकर पकड़ ले जायँगे। एक दिन और एक रात बन्दीगृह में रखकर वे तुम सबको दूसरे दिन फाँसी पर लटका देने का फैसला करेंगे। पर खबरदार, हिम्मत न हारना।

उनसे कहना कि हम फाँसी खाने के लिये तैयार हैं, पर हमें फांसी देने से पहले एक बार आप हमारे जहाज़ की जाँच ज़रूर कर लें। सम्भव है हमारे जहाज़ की तलाशी लेने के बाद आपको हमें फाँसी देना उचित न जान पड़े।"

सर्पराज का आदेश प्राप्त करके महानाविक ऊपर जहाज़ पर गया। थोड़ी ही देर बाद वहाँ कई सिपाहियों के साथ पुलिस का दारोग़ा आ धमका। जहाज़ के सभी नाविकों के हाथ में हथकड़ियाँ भर दी गईं। वे सब एक कारागार में बन्द कर दिये गए। अपनी ऐसी दुर्दशा देखकर सभी लोग बहुत दुखी और भयभीत हुए। महानाविक मणिभद्र ने उन्हें धीरज बँधाया और विश्वास दिलाया कि शीघ्र ही उन सबके बन्धन कट जायँगे और राजी-खुशी सब लोग अपने देश को लौटेंगे।

दूसरे दिन महानाविक ने जेल के बड़े अधिकारी से प्रार्थना की कि उसे थोड़ी देर के लिए राजा के सामने उपस्थित किया जाय। उसकी प्रार्थना मंजूर हुई और वह अपने कुछ चुने हुए साथियों सहित राजा के सामने पेश किया गया। इन्हें देखते ही राजा ने कहा, "तुम लोगों को प्राण-दण्ड दिया गया है, और

कल सवेरे तुम्हें फाँसी दे दी जायगी।"

"क्यों राजन्! ऐसा दण्ड किस कारण? हमने अपने जहाज़ पर से तोपें दागी थीं, क्या इसी कारण?"

"अवश्य, इसी कारण। तोप का दाग़ना तो दूर रहा, सात साल से हमारे राज्य में कोई बाजा तक नहीं बजा है। हमारे देशवासी सात साल से शोक मना रहे हैं। मेरे एक ही राजकुमार था जो आज के ही दिन सात साल हुए न जाने कहाँ खो गया। हम उसे कैसे भूल सकते हैं?" राजा ने कहा।

"श्रीमान्, हमें न तो आपके इस महान् शोक का ही कोई ज्ञान था और न आपकी आज्ञा का ही। हमारा अपराध अनजाने हुआ है। अब हमारी आपसे केवल एक यही प्रार्थना है कि एक बार आप हमारा वध करने से पहले हमारे जहाज़ की तलाशी ले लें। फिर आप जैसा उचित समझें, करें। हमें आपकी आज्ञा मानने में कोई उज्र न होगा।" महानाविक ने कहा।

राजा ने यह प्रार्थना स्वीकार कर ली और अपने समस्त दरबारियों के साथ जहाज़ पर गया। जहाज़ पर चढ़ते ही उन लोगों के आश्चर्य और आनन्द का ठिकाना न रहा। सात साल पहले खोया हुआ राजा का इकलौता प्यारा पुत्र वहीं जहाज़ पर उनका स्वागत

करने के लिए खड़ा था। राजकुमार ने अपने पिता के चरणों पर मस्तक रखकर अपना सारा हाल कह सुनाया कि किस प्रकार सात वर्ष पहले एक बुढ़िया डाइन ने टोना करके उसे सर्प बना दिया था, किस प्रकार महानाविक मणिभद्र की दया और उद्योग से वह जहाज़ पर उस जगह पहुँच सका, और किस प्रकार एक बहादुर नाविक ने उस बुढ़िया का भयंकर जादू तोड़ा, जिसके परिणामस्वरूप राजकुमार फिर से अपना मनुष्य का स्वरूप प्राप्त कर सका। यह सब हाल उसने विस्तार से अपने पिता को कह सुनाया।

फिर तो राजा की आज्ञा से उन सब नाविकों की हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ काट दी गईं और राजा ने उन सबको नये वस्त्र और आभूषण पहनाकर सम्मानसहित अपने सभासदों के बीच बिठाया। उन मेहमानों के सम्मान में कई दिन तक उत्सव और भोज होता रहा। कुछ दिन तक राजा तथा राजकुमार के मेहमान रहकर उन्होंने अपने देश जाने की आज्ञा माँगी। राजा ने सभी नाविकों को मनमाना धन दिया, और महानाविक मणिभद्र को एक नया जहाज़ और उसकी कन्याओं के विवाह के लिए राजकुमारियों के योग्य दहेज़ तथा वस्त्र-आभूषण देकर विदा किया।

बुद्धू बेटा : चंट चोर !

: १ :

एक समय की बात है, संसार के किसी कोने में एक बूढ़ी विधवा रहती थी, जिसके एक बेटा के अतिरिक्त संसार में अपना कोई और न था। ग़रीबी के कारण बुढ़िया अपने बेटे को खूब अच्छी तरह पाल-पोस नहीं सकती थी। उस लड़के का स्वभाव भी कुछ झेंपू था, अतः दिन-भर घर में ही पड़ा-पड़ा वह यहाँ से वहाँ किया करता था। उसे निठल्लू और नकारा समझकर लोग बुद्धू पुकारते थे। बुढ़िया भी अपने बेटे को बुद्धू ही कहती थी।

कुछ समय बाद थोड़ा सयाना होने पर बुद्धू के मन में परदेश कमाने का विचार उठा। बुढ़िया की समझ में नहीं आता था कि परदेश जाकर बुद्धू क्या कमाई कर सकेगा, इसलिए उसने मना कर दिया। किन्तु बुद्धू रोज़ ही, सुबह-शाम, परदेश जाने के अतिरिक्त और कोई बात ही न करता था। लाचार होकर

बुढ़िया को राजी होना पड़ा और बुद्धू को विदेश जाने की अनुमति देनी पड़ी।

नगर से बाहर आ बुद्धू ने जंगल का रास्ता पकड़ा। उस समय न रेलगाड़ियाँ चलती थीं और न सड़कों पर मोटर-बसें। सच तो यह है कि उन दिनों सड़कें भी न थीं, बहुत से नगर भी न थे, गाँव-गिराम भी अधिक नहीं थे। जंगलों की बहुत अधिकता थी, और सारे रास्ते जंगलों से ही होकर निकलते थे। बुद्धू को भी कई दिन तक जंगलों में होकर गुज़रना पड़ा। फिर कई दिन की यात्रा के बाद उसने एक बड़े सुन्दर महल के फाटक पर जाकर अपना आसन जमाया। उसे वहाँ बैठे देख एक आदमी ने अन्दर से पूछा, "अरे, तुम कौन ? यहाँ कैसे बैठे हो ?"

"भैया, नौकरी की खोज में घर से निकला हूँ," बुद्धू ने कहा।

उस आदमी ने बाहर आकर बुद्धू को फाटक के अन्दर ले लिया। आधी रात बीतते-बीतते बुद्धू ने देखा कि कितने ही सवार अपने-अपने घोड़े की रास पकड़े फाटक के भीतर आ रहे हैं। उन सबके आगे एक बड़ा भयंकर आदमी था, जिसके घोड़े की रास दूसरे आदमी ने पकड़ रखी थी। वास्तव में यही आदमी उन

डाकुओं का सरदार था और घोड़ों की पीठ पर सोना, चाँदी और अन्य अनमोल सामान लदा हुआ था।

डाकुओं के महल में कितने ही दिन रहकर बुद्धू उनका बहुत-कुछ हुनर सीख गया। फिर एक दिन डाकुओं के सरदार ने उसकी परीक्षा लेने के लिए उसे एक काम सौंपा। उसने कहा, "कल शाम को चार बजे एक आदमी घोड़े पर सवार हो कजरी बन की तरफ जाता हुआ दिखाई देगा। उसके पास अशर्फियों से भरी एक थैली होगी। जिस तरह हो सके वह थैली यहाँ ले आना है। अगर वह सीधे से न दे तो उस थैली को प्राप्त करने के लिए उसे खतम कर डालने में भी तुम्हें संकोच नहीं करना होगा।"

बुद्धू स्वभाव से बुरा आदमी न था, किन्तु उसका भाग्य उसे डाकुओं के घर में ले आया था। इतने ही दिनों में वहाँ से उसका मन ऊब गया था, पर अपनी जान बचाने के लिए उसे लूट और हत्या का कार्य करने के लिए राज़ी होना पड़ता था। उसने सिर झुकाकर सरदार के सामने उसकी आज्ञा शिरोधार्य की, और दोपहर होते-होते पैदल ही कजरी बन में पहुँच गया।

अपराह्ण में चार-पाँच बजे के बीच एक भलामानुस

घोड़े पर सवार हो उधर से निकला। बुद्धू पहले ही से वहाँ घात लगाए बैठा था और उसके उधर से निकलते ही उसके घोड़े के पिछले पैरों में फंदा डालकर गिरा दिया। फिर अपनी कटार लिये झपटकर वह उस आदमी के सामने जा पहुँचा। वह बेचारा ज़मीन पर से उठकर अभी अपने कपड़ों की धूल ही झाड़ रहा था कि सामने कटार तनी देख एकदम घबरा गया। उसने प्राणों की भिक्षा माँगी। बोला कि अगर उसकी जान छोड़ दी जाय तो जो कुछ उसके पास है सब-कुछ देने को तैयार है। बुद्धू ने बात मान ली और अशर्फियों की थैली ले ली। फिर उसके कपड़े लेकर उसे अपने फटे-पुराने कपड़े दे दिये, और अन्त में उसके घोड़े की पीठ पर बैठकर अपना रास्ता पकड़ा। सब-कुछ धन गँवाकर और भिखारियों-जैसा होकर भी जान बच जाने के कारण खुश होकर वह भलामानुस खुशी-खुशी अपने गाँव की तरफ़ चला गया।

डाकुओं के सरदार की गढ़ी की तरफ कई मील जाने के बाद बुद्धू के मन में एक कल्पना उठी। उसने सोचा कि अब अपने ही घर क्यों न लौट पड़े ? यह भाव मन में आते ही उसने घोड़े की रास फेर दी और अपने घर का रास्ता लिया। रात-भर चल-

कर सवेरा होते-होते वह अपने गाँव में पहुँच गया। अपने बेटे को एक पखवारे के भीतर ही परदेश से कमाई करके वापस लौटे देख बुढ़िया मारे खुशी के निहाल हो गई। बेटे की लाई हुई थाती को उसने बहुत सँभालकर अपनी झोंपड़ी में गाड़ दिया, और बेटे से कह दिया कि खबरदार, वह किसी से भी इसकी चर्चा न करे। बुद्धू ने कहा, "कभी नहीं।" लेकिन शाम होते-होते बुद्धू ने मुहल्ले-टोले की बुढ़ियों और लड़कों से सारा भेद कह डाला। बुद्धू जो ठहरा! धीरे-धीरे यह बात राजा के कानों तक पहुँच गई। दूसरे दिन सवेरे-ही-सवेरे राजा का दरबान बुद्धू को महल में ले जाने के लिए आया। बुढ़िया समझ गई कि बुद्धू ने अपना भेद ज़रूर किसी से कह दिया है। दरबान के साथ जब बुद्धू राजा के दरबार में जाने लगा तो बुढ़िया ने चुपके से उसके कान में कहा, "बेटा, राजा से सब बातें सच-सच कह देना। बड़े लोग सच कहने से खुश होते हैं और सारा दोष क्षमा कर देते हैं।"

राजा के सामने पहुँचने पर राजा साहब के पूछते ही बुद्धू ने सारी बातें सच-सच कह डालीं। पर वह राजा बड़ा लालची था। बुद्धू को डराकर उसकी सारी

अशर्फियां हड़प जाना चाहता था। इसलिए वह यही कहता था कि बुद्धू सरासर झूठ बोल रहा है। उसने ज़रूर किसी की हत्या कर डाली है और उसकी अशर्फियां लूट ली हैं, क्योंकि कोई आदमी जीते-जी अपना सारा धन इस तरह दे कैसे सकता है? बुद्धू बेचारे ने बहुत विश्वास दिलाया, बहुत कसमें खाईं, किन्तु राजा के ऊपर कुछ असर नहीं हुआ। अन्त में राजा ने कहा, "अच्छा, अगर तुम सचमुच ऐसे होशियार हो तो आज रात मेरी घुड़साल में से मेरा सबसे अच्छा सफेद रंग वाला घोड़ा निकाल ले जाओ। यदि तुम उसे निकाल ले गए और किसी ने तुम्हें पकड़ा नहीं तो मैं तुम्हारी बात सच मान लूंगा। परन्तु यदि यह काम न कर सके तो कल सवेरे ज़रूर सूली पर चढ़ा दिए जाओगे।"

: २ :

बेचारा बुद्धू राजा की बात सुनकर अवाक् हो गया। किसी तरह वह अपने घर वापस पहुँचा और रो-रोकर माता से सब हाल कह सुनाया। उसकी माता अपने पुत्र के भविष्य की कल्पना करके रोने लगी। माँ-बेटे को रोते-रोते शाम हो गई। फिर रात हुई। बुद्धू को भूख क्या होती, पर अपनी माता का दिल

रखने के लिए उसने थोड़ा खाना खा लिया। फिर माँ-बेटे दोनों चुपचाप बहुत देर तक पास-पास बैठे रहे।

बुद्धू ने दो घड़ी रात बीतने पर अपनी माता से अपना पुराना फटा-चिथा कुरता और धोती माँगी। फटे-पुराने कपड़े शरीर पर लपेटकर, कमर झुकाए, लठिया के सहारे ठेगता-ठेगता वह बुड्ढा भिखारी बनकर राजा की घुड़साल के फाटक के सामने सड़क पर रेंगने लगा। राजा के अस्तबल में वैसे तो पचासों एक-से-एक बढ़कर घोड़े थे, किन्तु उनमें तीन सबसे उत्तम थे और उन तीनों में भी सफ़ेद रंग वाला अद्वितीय था। घोड़ों की देख-रेख के लिए वहाँ बहुतेरे नौकर-चाकर नियुक्त थे।

अस्तबल के फाटक के पास खड़े हो उस बूढ़े भिखारी ने दरवाज़ा खटखटाया और आवाज़ लगाई, तो भीतर से एक आदमी निकलकर आया और बोला, "क्यों, मरने के लिए तुझे दूसरी कोई जगह नहीं मिली क्या ?"

"बूढ़े फ़कीर को एक रात यहीं पड़ा रहने दो बाबा ! सबेरे उठकर अपनी राह लूंगा।" बुद्धू ने गिड़गिड़ाकर कहा।

"इस रात यहाँ किसी भी अनजान आदमी को

नहीं रहने दिया जायगा। अपना रास्ता लो फ़कीर !" उसने डाँटकर कहा।

परन्तु बुद्धू वहाँ से इंच-भर भी न टला। फाटक पर खड़े-खड़े वह बार-बार रात-भर के लिए हाथ-भर जगह मिल जाने की प्रार्थना करता रहा। अन्त में तंग आकर उन लोगों ने उसे भीतर कर लिया और उसके सोने के लिए ज़मीन पर थोड़ा-सा पैरा (पुआल या पूला) डाल दिया। बुद्धू ज़मीन पर लेटकर थोड़ी ही देर में खुर्राटें भरने लगा। लोगों ने समझा कि वह सो गया है। परन्तु वह ज़ागता था और उन लोगों की सारी बातें सुन रहा था।

अपने तीन सर्वोत्तम घोड़ों की रखवाली के लिए उन लोगों ने एक योजना बनाई थी। यह तय हुआ कि तीनों घोड़ों की पीठ पर बारी-बारी से रात-भर कोई-न-कोई सवार बैठा ही रहेगा। आधी रात तक तीन सवार और फिर आधी रात के बाद तीन दूसरे सवारों को घोड़ों की पीठ पर बैठना था।

दो-तीन घण्टें घोड़े की पीठ पर बैठे रहने के बाद वे तीनों सवार नींद में चूर होकर पीठ पर बैठे-ही-बैठे सो गए। जब आधी रात हो गई तो बुद्धू ने उन तीनों में से सफ़ेद घोड़े वाले सवार के निकट जाकर उसे

धक्का देकर गिरा दिया और बोला, "जा बे, सो रह कहीं ! अब मेरा पहरा शुरू है।" वह सवार तो आँखें मलता हुआ एक कोने में जाकर सो रहा, और बुद्धू ने धीरे-से फाटक खोला और घोड़े की पीठ पर बैठकर अपने घर का रास्ता लिया। घर पहुँचा तो उसकी माँ बेटे की सफलता पर बहुत प्रसन्न हुई। घर के भीतर घोड़े को बाँधकर बुद्धू निश्चिन्त हो सो रहा। सवेरा होते ही घोड़े पर सवार हो बाज़ार चला गया।

सवेरा हो जाने पर राजा साहब जब अस्तबल में पहुँचे तो देखा कि उनके दो साईस तो दो घोड़ों की पीठ पर अभी तक सोये हुए हैं, पर वह सबसे अच्छा सफ़ेद घोड़ा नहीं दिखाई दे रहा है। क्रोध के मारे वे गरजने लगे। सभी लोग हर कोठरी में झाँक-झाँककर श्वेत अश्व की खोज कर रहे थे। कुछ ही क्षणों में मालूम हो गया कि सफेद घोड़ा गायब है। तब तो राजा साहब क्रोध के मारे आगबबूला हो गए। उन्होंने बुद्धू का पता लगाने के लिए तुरन्त एक आदमी को उसके घर भेजा। वहाँ जाने पर उस आदमी को मालूम हुआ कि बुद्धू एक सफ़ेद घोड़े की पीठ पर बैठकर उसे बेचने के लिए बाज़ार गया है। राजा के आदमी ने बुद्धू की माता से कहा कि राजा ने बुद्धू

को तुरन्त बुलाया है।

जब घोड़ा बेचकर बुद्धू बाज़ार से लौटा तो उसकी माता ने उसे राजा का सन्देश दिया। बुद्धू तुरन्त राजा के सामने हाज़िर हुआ। राजा ने बुद्धू से कहा, "तुम सचमुच बड़े चंट हो। कल की बाज़ी तो तुम जीत ले गए, पर अभी खेल ख़तम न समझो। क्या तुम हमारे पलंग की चादरें निकाल ले जा सकते हो? बस इस रात तुम्हें यही कर दिखाना है। अगर इस काम में तुम नाकामयाब रहे तो तुम्हें कल सवेरे फाँसी पर लटकाकर ही छोड़ूँगा।"

बुद्धू राजा का क्रोध देखकर, और जो कार्य करने के लिए उससे कहा गया था उसकी कठिनाई पर विचार करके सिहर उठा। सचमुच बड़ी विकट समस्या उसके सामने खड़ी थी। दरबार से अपने घर लौटते समय बेचारे बुद्धू के पैर लड़खड़ा रहे थे। घर पहुँचकर उसने अपनी माता को सारा समाचार कह सुनाया। बुढ़िया को निश्चय हो गया कि कल वह निपूती हो जायगी। बुद्धू को भी यही जान पड़ा कि अब उसके प्राणों का बचना कठिन ही है। किन्तु मसल मशहूर है कि मरता क्या न करता? सो बुद्धू ने भी मरने से पहले कुछ खेल रच लेने का इरादा किया। प्राणों

पर खेलकर उस रात भरसक कुछ कर दिखाने की वह योजना बनाने लगा।

उसने एक लकड़ी के ऊपर फटे-पुराने वस्त्र लपेटे, और उसे अपने पुराने कपड़े पहनाकर अपना ही एक पुतला तैयार किया। जब रात काफी बीत चुकी तब अपना पुतला लेकर वह राजा के महल के पिछवाड़े जा खड़ा हुआ। राजा ने सभी दरवाज़ों और खिड़कियों पर बरकन्दाज़ नियुक्त कर रखे थे। बुद्धू ने ज्योंही रस्सी फेंककर दीवार के ऊपर उस पुतले को खींचकर चढ़ाना शुरू किया तो उन लोगों को ऐसा लगा कि बुद्धू दीवार पर चढ़ रहा है। बस फिर क्या था, वे लोग दनादन गोलियाँ दागने लगे। बुद्धू भी ज़मीन में एक खूँटी गाड़, उसमें रस्सी का छोर बाँधकर वहाँ से चम्पत हो गया। जब गोलियाँ छूटने लगीं और बरकंदाज़ लोग 'वह मारा! ले लिया! अब जाते कहाँ हो बेटा!' की ललकारें करने लगे तो राजा साहब की नींद खुली। उन्होंने समझा कि बुद्धू पकड़ा गया। बिस्तरे पर रानी साहिबा को अकेली छोड़ वे भी आँगन में आ गए। उन्होंने देखा कि दीवार पर एक आदमी काफी दूर तक चढ़ा हुआ है, और बरकंदाज़ उस पर दनादन गोलियाँ छोड़ रहे हैं, पर

वह नीचे नहीं गिरता था। यह देखकर राजा को बड़ा क्रोध आया और बरकंदाज़ों को डाँटकर बोले, "तुम सब-के-सब निकम्मे हो गए। देखते नहीं हो कि तुम्हारा वार ठीक निशाने पर नहीं पड़ रहा है।"

फिर तो राजा साहब स्वयं गोलियाँ छोड़ने लगे। उधर बुद्धू उस भीड़-भाड़ में राजा साहब के महल में घुस गया। उनके शयन-कक्ष का दरवाज़ा भीतर से बन्द नहीं था, क्योंकि रानी साहिबा को महाराज सोती हुई छोड़कर आये थे। उनका दुशाला भी दरवाज़े के पास ही ज़मीन पर पड़ा था। बुद्धू ने झट उठाकर वह दुशाला ओढ़ लिया और पलंग पर चढ़कर 'बड़ी ठंड है, बड़ी ठंड है,' कहकर सारी चादरें अपनी तरफ़ खींचने लगा। बेचारी रानी की नींद अच्छी तरह टूटी नहीं थी, सो वह एक तरफ़ पलंग पर खिसकती गईं। जब बुद्धू ने कुल चादरें समेट लीं तो पलंग पर से उतर आया। "अब कहाँ चले?" रानी ने आँखें बन्द किये ही पूछा।

"बुद्धू मारा गया है न! ज़रा मैं भी देख आऊँ।" राजा बने बुद्धू ने कहा।

"बस भी करो!" रानी ने कहा। परन्तु बुद्धू अब वहाँ कहाँ रुकने वाला था! सारी चादरें लेकर नौ-दो-

ग्यारह हुआ !

उधर जब राजा साहब लौटकर अपने पलंग पर पहुँचे तो रानी साहिबा ने झुँझलाकर कहा, "यह क्या रात-भर के लिए आवा-जाही लगा रखी है आपने ? बार-बार ओढ़ना खिसकाने से मैं तो ठंड के मारे मरी जा रही हूँ।"

"एक बार बाहर गया तो यह रात-भर की आवा-जाही हो गई, क्यों ?" राजा साहब ने जवाब दिया।

"क्या अभी थोड़ी देर पहले आप बिस्तरे में घुस-कर फिर बाहर नहीं गये हैं ?"

"नहीं-नहीं, हरगिज़ नहीं।"

"नहीं-नहीं; कहिए, हाँ-हाँ। आप ही तो थे, जी हाँ, आप ही।"

राजा साहब सिटपिटाकर रह गए। उन्हें भी तो काफ़ी ठंड लग गई थी। पलंग पर लेटकर बदन ढकने के लिए जब वह कम्बलों के नीचे पड़ी चादरें खींचने लगे तो चादरों का किनारा तक हाथ न आया। तब अत्यन्त अधीर होकर वे पलंग के नीचे उतर आए। रानी साहिबा ने कहा, "देखिए, फिर निकले बिस्तर से बाहर आप ! इसे भी पाँच मिनट बाद आप भूल जायँगे।" पर बेचारे राजा ने कोई जवाब न दिया।

वे अत्यन्त अधीर और विक्षिप्त हो रहे थे। मोमबत्तियाँ जलाकर देखा तो पलंग पर की सारी चादरें गायब थीं। बेचारे एकदम चीख़ उठे। रानी भी बहुत दुखी हुईं। बोलीं, "मुआ, गज़ब कर गया! कैसी शरम की बात है! तुम्हारे पलंग पर वह लेटा और सारी चादरें भी समेट ले गया। मेरा कहा मानो तो अब बस करो। उसका नाम भी अब किसी से मत लो, नहीं तो न जाने कितनी और परेशानियों का सामना करोगे। मुआ आफ़त का परकाला है, परकाला।" परन्तु राजा साहब क्रोध के मारे ऐसे बदहवास हो गए थे कि बुद्धू को बहुत देर तक ज़ोर-ज़ोर से गालियाँ देते रहे।

रात-भर ठंड खाकर भी राजा साहब का क्रोध ठंडा न हुआ। सवेरा होते ही उन्होंने कई दरबान बुद्धू को तुरन्त पकड़कर उनके सामने हाज़िर करने के लिए रवाना किये। उसके घर पहुँचने पर उसकी माता से उन्हें मालूम हुआ कि बुद्धू चादरें बेचने के लिए बाज़ार गया हुआ है।

: ३ :

बाज़ार से लौटने पर बुद्धू को अपनी माता से मालूम हुआ कि उसकी फिर दरबार में तलब हुई है।

बुद्धू उसी दम राजा के सामने हाज़िर हो गया।

राजा साहब बुद्धू को देखते ही जलकर ख़ाक हो गए। बोले, "बच्चू, इस बार तुम हमारे शिकंजे में से निकल जाओ तो जानूं! पिछली रात तुमने जितनी अशिष्टता की है, सबका फल तुम्हें भोगना पड़ेगा। इसी रात राजगुरु के मकान से सारा सोना और हीरे-जवाहिरात यदि तुम चुराकर न ले जा सके तो सवेरे चौराहे पर तुम्हें गड़वाकर कुत्तों से नुचवा लिया जायगा।"

राजा की बातें सुनकर बुद्धू काँप उठा। यह बात हर किसी को मालूम थी कि राजगुरु अपने कीमती रत्नों को गुप्त जगह में छिपाकर रखते हैं। उन रत्नों को चुरा लाना तो दूर, वे कहाँ रखे हैं यह जानना भी कठिन था। बुद्धू की करामातें देखकर राजा साहब को यह सन्देह हो रहा था कि उसने ज़रूर कोई भूत-प्रेत सिद्ध कर रखा है, और उसी की सहायता से वह सब सफलताएँ प्राप्त कर लेता है। इसीलिए राजा ने राजगुरु के यहाँ चोरी करने की शर्त रखी थी। राजगुरु बड़े भारी पण्डित थे। वे अपने सारे रत्न मन्दिर में काली, भैरव, हनुमान, नादिया आदि कई खोखली मूर्तियों के भीतर रखते थे। अतः उनके मन्दिर के भीतर बुद्धू के भूत-प्रेत का ज़ोर कुछ काम न करेगा।

बुद्धू को इस बार लोहे के चने चबाने थे। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि वह कैसे इस बार भी सफल हो सके। फिर भी उसने हिम्मत नहीं हारी। दिन-भर पड़ा-पड़ा वह गुनता रहा। फिर संध्या-समय कुछ सोचकर बाज़ार की तरफ निकल गया। राजा साहब के घोड़े और चादरों की बिक्री से उसे काफ़ी पैसे मिल गए थे। पैसे तो पहले वाले भी उसके पास ज्यों-के-त्यों पड़े थे। बाज़ार में जाकर उसने कुछ वेशकीमती कपड़े और कुछ रत्न-आभूषण खरीदे। फिर उन सब चीज़ों की एक गठरी बना, उसे बगल में दबा-कर, संध्या के झुटपुटे में राजगुरु के मन्दिर में चला गया। वहाँ पुजारीजी को दक्षिणा दे मन्दिर का पट खुलवाकर भीतर घुसा और पूजा आदि करके भगवान् की प्रतिमा के पीछे वेदिका के नीचे छिपकर बैठ गया। पुजारी ने समझा, दर्शक भगवान् के दर्शन करके चला गया है। वस्तुतः संध्या के बाद पुजारीजी का कार्य समाप्त हो जाता और रात में राजगुरु अकेले ही मन्दिर में आते। कुछ देर तक आराधना करने के उपरान्त वे भगवान् को स्वयं शयन कराते, अपने ही हाथों पट डालते, तथा मन्दिर के कपाट बन्द करते थे। बुद्धू ने यह बात मालूम कर ली थी।

थोड़ी रात बीतने पर जब राजगुरु भगवान् की मूर्ति के सामने साष्टांग दंडवत् करके आराधना कर रहे थे, अकस्मात् विष्णु भगवान् के पीछे उन्हें शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी साक्षात् विष्णु भगवान् के दर्शन हो गए। यह दृश्य देख राजगुरुजी को तत्क्षण रोमांच हो आया, वाणी गद्गद् हो गई, और आँखों से प्रेमाश्रु छलककर ढुलकने लगे।

"भक्त, मेरे दर्शनों के लिए तू कितना अधीर रहा करता था ! तेरी नित्य की आराधना इसी निमित्त थी, सो ले। आज मैंने तुझे दर्शन दे दिए !" 'भगवान्' बोले।

"प्रभो ! भक्त-वत्सल ! दीनानाथ ! पतित-पावन ! रुँधे हुए कण्ठ से राजगुरु बोल रहे थे।

'भगवान्' ने मुस्कराकर उन्हें चुप रहने के लिए उँगलियों से संकेत किया। फिर बोले, "भक्त, शरीर त्यागकर हमारे लोक में पहुँचने की तू सदा कामना करता रहता है, सो ले। आज मैं तुझे स्वयं निज लोक में ले जाने के लिए आ गया हूँ। कुछ ही घण्टों बाद तेरा चोला छूटने वाला है। इसलिए यह आवश्यक है कि अब अपने अन्तिम समय में तू मोह-माया से मुक्त हो जा। जा, तुरन्त जा। अपना सारा धन, सुवर्ण, रत्नादि

लाकर यहाँ मन्दिर में भगवान् को अर्पित कर दे और मायारहित हो जा।"

राजगुरु 'भगवान्' का आदेश पाते ही दौड़ चले। घर में रखी अशर्फियों के तोड़े तथा विभिन्न मूर्तियों के खोखलों में छिपाकर रखे हीरे-जवाहिरात सब बटोर लाए, और भगवान् के सामने रख हाथ जोड़कर बोले, "प्रभो, सब सेवा में उपस्थित हैं। अब घर में कुछ शेष नहीं है। अब मैं यह सब भगवान् के चरणों में समर्पण कर, मोह-माया से रहित हो, यह अधम शरीर त्यागकर आपके साथ चलने को तैयार हूँ।"

'भगवान्' ने मुस्कान से राजगुरुजी का प्रस्ताव स्वीकार किया। जिस बोरे में राजगुरु वह सब सम्पत्ति लाए थे, वह पास ही में पड़ा था। उसकी तरफ संकेत करके 'भगवान्' ने कहा, "वत्स, मेरे विमान के आने में अब अधिक विलम्ब नहीं है। बेचारे गरुड़ को ठण्डे देशों की यात्रा करने के कारण आज सवेरे से ही जुकाम था, सो मुझे पैदल ही तेरे लिए यहाँ तक आना पड़ा है। तू इस बोरे के अन्दर पद्मासन लगाकर बैठ जा।"

बेचारे राजगुरु कस-कसाकर बोरे में बैठ तो गए, परन्तु उसमें पद्मासन बड़ी कठिनाई से लगा पाए। अब 'भगवान्' भी वेदिका से नीचे उतर आए, और

एक रस्सी से, जिसे वे अपने साथ लाए थे, उस बोरे का मुँह कसकर बन्द कर दिया। उनकी यह लीला देखकर राजगुरु ने कहा, "प्रभो ! यह कैसा ? इस स्थान में तो बड़ा कष्ट है।"

"भक्त, यह कष्ट क्षणिक है। चिन्ता न कर। स्वर्ग में जाने से पूर्व हर आत्मा को नरक का फाटक पार करना होता है। अतः तू यही समझ कि इस क्षण नरक का फाटक पार कर रहा है। विमान आते ही तू क्षण-भर में सीधे बैकुण्ठ (विष्णु-लोक) में ही पहुँच जायगा।" यह कहकर 'भगवान्' ने मन्दिर का पट खींच लिया और सारा माल उसमें बाँधकर उस बोरे को घसीटते हुए मन्दिर के अलिन्द में ले आए। फिर वहाँ से तीन-चार सीढ़ियाँ जो उतरती थीं, उन पर से उस बोरे को सीधे नीचे सड़क की तरफ लुढ़का दिया। एक तो काफी ठंड थी, दूसरे खोपड़ी और कुहनी की हड्डियों में भारी चोट ! और सबके ऊपर अपने 'भगवान्' के ये अनोखे रंग-ढंग ! राजगुरुजी एकदम बेहोश हो गए। वे समझ गए कि स्वर्ग या नरक में वे जायँ चाहे न जायँ, मृत्यु की गोद में वे अवश्य पहुँच चुके हैं। पर एक नई विपत्ति और जाने कहाँ से आ गई थी। वे राम-नाम का उच्चारण

भी नहीं कर सकते थे, क्योंकि न जाने कब और किस तरह एक कपड़े से उनका मुँह भी बँध चुका था।

बुद्धू राजगुरु के धन की एक गठरी और राजगुरु की दूसरी गठरी बनाकर अपने घर लाया। उसने पहली गठरी तो अपने घर के भीतर ले जाकर पटक दी और दूसरी गठरी चुपके से राजा की गोशाला में रख आया। दूसरे दिन गोपाष्टमी पड़ती थी। महारानी सूर्योदय से पूर्व ही गायों की पूजा करने के लिए गोशाला में गईं तो उनके पैर एक गुजगुजी गठरी से टकराए। उन्होंने अपनी दासी से कहा, "देख री! यह गठरी कैसी है?" दासी ने गठरी को जो हाथ लगाया तो गठरी हिलने लगी। बुद्धू ने राजगुरु का मुँह कपड़े से बाँध दिया था, हाथ-पाँव भी रस्सी से कस दिए थे, पर बेचारे अभी मरे नहीं थे। जिन महारानी का मस्तक कितनी ही बार राजगुरु के चरणों में गिरा था, उन्हीं महारानी के चरणों का अपने सिर में स्पर्श होने से वे सिहर उठे थे। फिर ठण्ड भी तो काफी थी। बेचारे बँधे-बँधाए कँपकँपा रहे थे। दासी तो एकदम डर गई। महारानी उल्टे पैर महल को लौट पड़ीं और राजा साहब को कोसने लगीं। उनका कहना था

कि यह सब बुद्धू की ही करतूत है। उसने उस गठरी में कोई भूत-प्रेत या कोई दूसरी भयानक बाधा बाँधकर रख छोड़ी है। जब तक वह बाधा दूर नहीं होती गो-पूजा कैसे होगी ?

राजा अपने मन्त्रियों को लेकर तुरन्त गोशाला में पहुँचे। प्रधान मन्त्रीजी ने ज्यों ही गठरी को अपने पैर से स्पर्श किया तो गठरी काँपने लगी। राजा ने बुद्धू को उसी दम वहाँ पकड़वा मँगाया।

बुद्धू ज्योंही वहाँ हाज़िर हुआ, उसे गठरी खोलने की आज्ञा दी गई। उसने राजा को सम्बोधन करके कहा, "पृथ्वीनाथ, चाहे आप इसी दम टुकड़े-टुकड़े करा दें, चाहे मेरी खाल ही क्यों न खिंचवा लें, इस गठरी को मैं हाथ नहीं लगा सकता। आप रुपये-पैसे का लालच भी मुझे न दें। दस हज़ार रुपये पाने पर भी मैं इसमें हाथ न लगाऊँगा।"

"मैं तुझे दस हज़ार रुपये दूँगा।" राजा ने कहा।

"नहीं, बीस हज़ार भी दें तो भी मैं न छुऊँगा।"

"मैं तुझे बीस हज़ार ही दूँगा।"

"मैं तो तीस हज़ार पाने पर भी इसे न खोलूँगा।"

"मैं तुझे पैंतीस हज़ार रुपये दूँगा," महाराज ने कहा।

बुद्धू चुप रहा। मन्त्री ने कहा, "अब बढ़ो आगे, खोलो इस गठरी को !"

बुद्धू बोला, "मन्त्रीजी, इसमें से जो दानव निकला तो वह मुझे तत्काल ही खा जायगा, फिर मेरी बुढ़िया माता का कौन सहारा होगा ? अगर रुपये मिल जायँ तो मैं इसमें हाथ लगाऊँ।"

राजा ने सोचा कि बुद्धू को मारने का यह अच्छा अवसर हाथ लगा है। उन्होंने उसी जगह पैंतीस हज़ार रुपये की हुण्डी बुद्धू के नाम लिख दी।

हुण्डी को अपनी अंटी में रखकर बुद्धू ने बोरे के मुँह पर बँधी रस्सी खोल दी और उसमें से राजगुरु को बाहर निकालकर खड़ा कर दिया।

राजा और मन्त्रियों का सिर शर्म के मारे नीचे झुक गया। बुद्धू ने यह तीसरी और अन्तिम बाज़ी भी मार ली थी।